(२८५)

सुनत बात भूपति मन जल्यो, मानो अगनि माँहि घृत पर्‌यो।
खोटो काम कियो अंजनी, वेग जाय काढ़ो पापिनी ॥

(२८६)

चन्द्र ज्योति सम गोत्र हमार, राहु आनि त्यों कियो पसार।
भयो कुकर्म बुरो आचार, काढ़हु वेगि न लावहु वार ॥

(२८७)

नगर लोग जो सुनिहैं कोय, तो अपयश बढ़िहै सिर मोय।
कियो कुकर्म संग्रह्यो पाप, ना यह बेटी ना मैं बाप ॥

(२८८)

सुनी बात मस्तक अति धुन्यो, मीचे नैन कान कर दयो।
मंत्री 'सुमति' कहे सुनि राय, ऐसौ क्यों तुम करो उपाय ॥

(२८९)

सरला शील सती अंजनी, दोऊ कुल की चूड़ामनी।
फिर से मन में करो विचार, उचित नहीं यह दुर्व्यवहार ॥

(२९०)

मंत्री वचन लियो विश्राम, बहुरि कोप करि बोले ताम।
देश-नगर से करो निकास, वेग जाय देओ वनवास ॥

(२९१)

विलख वदन बोली अंजनी, पाली हुती जैसी पदमिनी।
ऊँची नीची लेय उसाँस, नैन झिरैं ज्यों भादों मास ॥

वज्राङ्गबली-हनुमान

सम्पादक :—

कमलकुमार जैन शास्त्री 'कुमुद'

फूलचंद जैन 'पुष्पेन्दु'

खुरई (जिला-सागर) म० प्र०

प्रकाशक

भीकमसेन रतनलाल जैन

१२८६ वकीलपुरा, देहली-११०००६

कुंथु सागर स्वाध्याय सदन प्रकाशन

खुरई (जिला-सागर) म० प्र०

३१ जुलाई १९७३ ३१.७.७३

प्र० संस्करण २००० } वीर० नि० संवत् २४९९ { लागत-मूल्य २-००
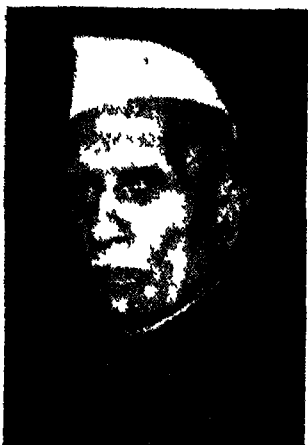
पूर्वाभास

"रामायण" इस कल्पकाल की एक अत्यन्त लोकप्रिय कृति है, जो विविध भाषाओं, विविध देशों और विविध धर्मों में युगों-युगों से विविध शैलियों में गाई जाती रही है। संत-मुनियों से लेकर अद्यतन कवियों की वाणी भी इसके मुख्य-गौण पात्रों का चरित्र-चित्रण कर—

"यत्कोकिल: किलमधौ मधुरं विरौति"

की भाँति मुखर हो-हो उठी है। यही कारण है कि रामायण विषयक कोटि-कोटि ग्रथ महाकाव्य और खंड काव्यों के रूप में हमारे समक्ष विद्यमान हैं।

प्रस्तुत "वज्रांगबली हनुमान" भी एक ऐसा ही खंड-काव्य है—जिसकी प्राण-कथा पदम-पुराण नामक जैन रामायण के वांछनीय स्थलों के आधार-स्तम्भों पर लिखी गई है। भावों की अनादि-निधनता को लक्ष्य में रखते हुए हमने इसकी भाषा की पुरातनता को भी अक्षुण्ण ही रखा है, दान-कथा या शील-कथ

की भाँति ! अस्तु।

असल में तो यह खड-काव्य कविवर श्री ब्रह्मराय रचित 'हनुमान-चरित्र' का आमूल-चूल संशोधन मात्र है; हमारी अपनी कोई मौलिकता इसमें किंचित् भी नहीं है। तथापि इसके पुनर्लेखन की अनिवार्यता का मुख्य कारण यह रहा कि मूल हस्त-लिखित प्रतियाँ लिपिकारों की कलम-कुल्हाड़ियों से आहत होकर जब मुद्राराक्षसों (कंपोजीटरों) की शरण में आई तो उनकी महती कृपा से मरणासन्न ही हो गई।

सूरत से प्रकाशित "हनुमान-चरित्र" इसका ज्वलन्त उदाहरण है। किमधिकम्।

इस ग्रंथ के प्रकाशन का सारा भार उठाने वाले बाबू रतन-लाल जी जैन कालका निवासी जो कि वर्तमान में एक लम्बे अरसे से वकीलपुरा, देहली में रहते हैं हमारे सुपरिचित घनिष्ठ मित्रों में से एक हैं जिन्होंने मेरी तुच्छ लोह-लेखनी पर विमुग्ध होकर मुझे यह ग्रंथ लिखने को सदैव प्रेरित किया है। अस्तु, उनका हम जितना भी आभार मानें थोड़ा ही होगा।

"वज्रांगबली हनुमान" उन ही की सतत् प्रेरणा का प्रतिफल है। बाबू रतनलाल जी जैन की साहित्य प्रकाशन की अभिरुचि कोई नई नहीं है, अपितु समय-समय पर वे अपने न्यायोपार्जित वित्त का सदुपयोग सदा-सर्वदा से जैन साहित्य के प्रकाशन पर किया करते हैं।

जिन वाणी सरस्वती मन्दिर के यह भक्त पुजारी अपने हृदय में, समर्पण का कितना गहरा भाव छिपाये हुए हैं वह लेखनी से नहीं, प्रस्तुत प्रत्यक्ष दर्शन से ही मापा जा सकता है। 'सादा-जीवन, उच्च विचार' के ज्वलंत प्रतीक 'श्री बाबू रतन-लालजी' पवित्र खादी से अपनी देह को विभूषित किये हुए यदि कदाचित् समागम पथ पर आप को मिल जावें तो सर्वप्रथम प्रश्न

यही होगा—पंण्डित जी प्रचार योग्य सत्साहित्य के प्रकाशन की यदि कोई योजना हो तो हमें नहीं भूलियेगा।

अस्तु आत्म निह्नवता का गुण तो आप में कूट-कूट कर भरा है। यही कारण है कि जहाँ उनकी प्रशस्ति में हमें यहाँ २-४ पृष्ठ भरना अनिवार्य था वहाँ केवल २-४ परिचयात्मक पंक्तियाँ ही उनके व्यक्तित्व की झाँकी दिखाकर सन्तोष करना पड़ रहा है।

काव्य-दृष्टि से किसी भी खंड-काव्य में जो लक्षण होना चाहिए वे सब इसमें विद्यमान हैं। नव-रस-अलंकारों से युक्त यह चौपाई छंद काव्य संयोग-वियोग, शृंगार और करुण-वीर रस के फिल्मी दृश्य उपस्थित करता है।

जैन धर्म का प्राण वैराग्य रस है और इस रस से यह काव्य पूर्णरूपेण ओत-प्रोत है। यथा स्थान जैन तत्त्वों का निरूपण करते चलना इस काव्य की अपनी एक अनूठी शैली है।

कमलकुमार जैन शास्त्री

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य के चरितकाव्यों को देखने से पता चलता है कि ये चरित्रकाव्य प्रबन्धकाव्य का ही एक प्रकार हैं। यही कारण है कि प्राय: चरित्र-काव्यों को चरित, कभी कथा और कभी पुराण कहा गया है, जैसे 'पउमचरिउ', 'रिठ्ठणेमिचरिउ', 'जसहर-चरिउ', 'पज्जण्णकहा', 'भवित्त कहा', 'महापुराण', 'हरिवंश पुराण', आदि। संस्कृत में चार शैलियों के प्रबन्ध काव्य मिलते हैं—शास्त्रीय शैली, ऐतिहासिक शैली, पौराणिक शैली और रोमांचिक शैली। इसमें से प्रथम के अतिरिक्त अन्य तीन शैलियों में चरित काव्य लिखे गये हैं। ऐतिहासिक शैली के चरित काव्यों में—'पृथ्वीराज विजय,' बिक्रमांकदेव चरित', 'कुमारपाल चरित', 'गउडबहो' आदि हैं। पौराणिक शैली में लिखे गये चरित काव्यों में 'पद्मचरित', 'पार्श्वनाथ', 'पउम चरिय', 'महापुराण', 'पास पुराण', आदि प्रमुख हैं। रोमांसिक शैली के चरितकाव्यों में 'नवसाहसांक चरित', 'चन्द्रप्रभचरित', 'शान्तिनाथ चरित', 'मलयसुन्दरी कहा', 'अंजणा सुन्दरी चरित', 'भविसयत्त कहा', 'करकण्डु चरिउ', 'जसहर चरिउ', आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं।

चरित काव्य शैली जीवनचरित की शैली होती है, जिसमें प्रारम्भ में या तो ऐतिहासिक ढंग से नायक के पूर्वज, माता-पिता और वंश का वर्णन रहता है या पौराणिक ढंग से उसके पूर्व भावों का वृतान्त तथा उसके जन्म के कारणों का वर्णन होता है अथवा कथाकाव्य की तरह उसके माता-पिता, देश

और नगर का वर्णन रहता है। उसमें चरित नायक के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक की अथवा कई जन्मों (भवान्तरों) की कथा होती है।

चरित काव्यों में प्रायः प्रेम, वीरता, धर्म या वैराग्य-भावना का समन्वय दिखलाई पड़ता है। पर सब में कोई न कोई प्रेम-कथा अवश्य होती है। उसके पौराणिक कथानक में प्रेमाख्यानक रंग भर कर उसे अधिक सजीव बनाने का प्रयत्न किया जाता है। जैन चरित-काव्यों में प्रायः अन्त में नायक किसी प्रेरणा या उपदेश से संसार से विरक्त होकर जैन मुनि बन जाता है। इन जैन चरित-काव्यों में अलौकिक अति प्राकृत और अतिमानवीय शक्तियां, कार्यों और वस्तुओं का समावेश अवश्य रहता है, जो पौराणिक और रोमांसिक शैली के कथा काव्यों, पौराणिक कथाओं और लोक कथाओं की देन है। इस कारण इसमें साहसपूर्ण, आश्चर्योत्पादक और रोमांसिक कार्यों तथा तत्त्वों की अधिकता होती है और उन सभी कथानक रूढ़ियों की भरमार होती है, जो लोक-कथा और कथा-आख्या-यिका में बहुत अधिक मिलती है।

इन चरित काव्यों का कथानक शास्त्रीय प्रबन्ध काव्यों जैसा पंच संधियों से युक्त और कार्यान्विति वाला नहीं होता, वह कथा काव्यों की तरह स्फीत, विशृंखल, गुम्फित या जटिल होता है। इनकी शैली प्रबन्ध काव्यों जैसी अतिशय अलंकृत, चमत्कारपूर्ण या पाण्डित्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति से युक्त नहीं होती, बल्कि इसमें अधिक सहजता, सरलता, सादगी और सामान्य जनता के लिये पर्याप्त आकर्षण होता है। इन चरित-काव्यों का उद्देश्य अधिक उभरा और स्पष्ट होता है : यह उद्देश्य कभी धार्मिक कभी प्रशस्तिमूलक और कभी लोक कल्याणा-

भिनिवेशी होता है। इसी कारण चरितकाव्य उपदेशात्मक, प्रचारात्मक या प्रशास्तिमूलक प्रतीत होते हैं :

संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और आधुनिक भारतीय भाषाओं, सभी में लिखे हुए जैन चरित काव्यों में विषय वस्तु की सामानता मिलती है। इसका सबसे बड़ा कारण है कि उनके सामने कथानकों का स्वरूप प्राय: निश्चित रहता था, प्रतिभा सम्पन्न कवि परम्परा में बंधी कथा में काव्यानुकूल प्रसंगों पर प्राय: अपने कवित्व की प्रतिभा प्रदर्शन करते थे। ये जैनचरित काव्यों के दो प्रकार मिलते हैं—अनेक पात्रों की कथा वाले ग्रन्थ और एक पात्र की कथा कहने वाली कृतियाँ। प्राकृत और अपभ्रंश जैन कवियों द्वारा लिखित जैन काव्यों की जो धारा मिलती है वह बड़ी ही गौरवशालिनी है।

जैन महाराष्ट्री का प्राचीनमत चरितकाव्य विमल सूरि कृत 'पउम चरिय' है, जिसमें राम की कथा जैन पुराणों के ढंग पर कही गयी है। इसकी रचना सम्भवत: महावीर स्वामी के निर्वाण के ५३० वर्ष बाद हुआ। समस्त काव्य गाथा छंदों में निबद्ध है, किन्तु कहीं-कहीं संस्कृत वर्णिक वृत्त भी प्रयुक्त हुए हैं। अन्य चरित काव्यों में शीलांक (८६८ ई०)का 'चउपन्न महापुरिम-चरिय', 'वर्धमान' (११०३ ई०) का 'आदिनाथ-चरित', हरिभद्र (१२ वीं सदी ई०) का 'मल्लिनाथ चरित' तथा 'चन्द्रप्रभ चरित', लक्ष्मण भणि (११४३ ई०) का सुपस्सनाह चरिय', गुणचन्द्र का महावीर चरित (११९० ई०) प्रसिद्ध है।

प्राचीन अपभ्रंश में पुष्पदन्त का भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने महापुराण की रचना की, जिसमें ६३ महापुरुषों के चरित्रों का र्णन है। ये अत्यधिक अक्खड़ स्वभाव के थे अतएव इन्हें 'अभिमग्न मेरु' 'अभिमान चिह्न', 'कवि-पिशाच' जैसी

विचित्र पदभ्ङ्गियों से विभूषित किया गया था। 'महापुराण' में जैन शलाका पुरुषों के जीवन का वर्णन हैं। आरम्भिक ३७ संधियों में तीर्थंकर ऋषभदेव के चरित्र का वर्णन है। इसके अतिरिक्त ११ संधियों में रामचरित्र एवं १२ संधियों में कृष्ण चरित्र का निरूपण भी किया गया है। पुष्पदन्त के महापुराण को जैन धर्मानुयायी उसी आदर की दृष्टि से देखते हैं जिस दृष्टि से ब्राह्मण धर्मानुयायी महाभारत को। इनकी दूसरी कृति 'जस हर चरिउ' में मुनि यशोधर के चरित्र का वर्णन है, जिसमें कापालिक शैव-मत पर जैनधर्म की विजय घोषित की गई है। इसके उपरान्त धनपाल की "भविसयत्त कहा" (११वीं शती) को लिया जा सकता है। इसके रचनाकार धक्कड़वंशीय दिगम्बर जैन थे और उनकी माता का नाम धनश्री था। यह चरित काव्य २२ सन्धियों का है, जिसमें गजपुर के नगर सेठ धनपति के पुत्र भविष्यदत्त की कथा वर्णित है। साहित्यिक दृष्टि से 'भविसयत्त कहा' एक रुचिर और कलात्मक कृति है। अपभ्रंश चरितकाव्यों की परम्परा में "मुनि-कनकामर" (११वीं शती उत्तरार्द्ध) का 'कर कण्ड चरिउ' प्रसिद्ध कृति है, जो काव्योचित लालित्य की दृष्टि से उदात्त कृति न होते हुए भी, कथानक-रूढ़ियों के अध्ययन की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण है। इस काव्य में 'प्रत्येक बुद्ध' महात्मा 'करकण्ड' के जीवन की कथा १० परिच्छेदों में विभक्त है।

विभिन्न जैन भण्डारों की प्रकाशित सूचियों में इस प्रकार के ग्रन्थों के उल्लेख मिलते हैं। इनमें धर्म सूरि (१२०९ ई०) की रचित 'श्री जम्बू स्वामी रासा' की भाषा में अपभ्रंश का आभास मिलता है। शब्दावली तद्भव प्रधान है। इसी प्रकार अम्बदेव कृत चरित्र काव्य 'संघपति समराराए' (१४वीं शता०

वि०) में दानवीर समरशाह का चरित्र भाषा में वर्णित है। अन्य कृतियों में भाषा निरन्तर विकसित होती गई। १३५५ ई० में रचित उदयवन्त कृति 'गौतमरासा' (अप्रकाशित), विद्धूण कृत १३६६ ई० में रचित 'ज्ञान पंचमी चउपइ', १४८६ ई० में दयासागर सूरि रचित 'धर्मदत्त चरित', ईश्वर सूरि कृत 'ललि लाङ्गचरित्र (१५०५ ई०), सार सिखा-मनरास (१४६१ ई०) यशोधर चरित्र' (१५२४ ई०), 'कृपण चरित्र' (१५२३ ई०), ठकरसी कृत 'कुशल लाभ कृत', १५५६ ई० में रचित 'माधवानल चौपाई', विद्याभूषण सूर कृत 'भविष्यदत्त रास', रायमल्ल कृत 'हनुमन्त चरित्र' (१५५६ ई०) और 'भविष्यदत्त चरित्र', जिनदास कृत 'जम्बू चरित्र' (१५८५ ई०), बनवारी लाल कृत 'भविष्यदत्त चरित्र' (१६०६ ई०), नन्द कृत 'यशोधर चरित्र' (१६२३ ई०) आदि प्रमुख हैं। इस प्रकार इन चरित काव्यों की रचना अठारहवीं उन्नीसवीं शती तक होती रही। उदाहरण के लिए आमेर शास्त्र भाण्डार में प्राप्त खुशालचन्द कृत 'हरिवंश पुराण' (१७२३ ई०), 'पद्मपुराण' (१७२६ ई०), धन्यकुमार चरित्र', 'जम्बू स्वामी चरित्र', का उल्लेख किया जा सकता है।

ये 'जैन-चरित्र-काव्य' जैसा कि पूर्व में ही कहा गया है प्राय: संस्कृत, प्राकृत अपभ्रंश और पुरानी हिन्दी में ही प्राप्त हैं, इनमें अपभ्रंश में लिखे गये चरित्र-काव्यों का विशेष महत्त्व है। सन् १६३३ के करीब जर्मन के खोजी विद्वान् हरमन याकोबी भारत आये और अहमदाबाद के जैन भण्डार का निरीक्षण करते हुए उन्हें एक साधु के पास से 'भविसयत्त कहा' नामक पुस्तक देखने को मिली। उसके उपरांत उन्हें 'नेमिनाथ चरित' ग्रन्थ भी प्राप्त हुआ। तब से विभिन्न जैन भण्डारों से विद्वानों द्वारा अनेकानेक ग्रन्थ प्रकाश में लाये गये। जिनमें पाटण का जैन ग्रंथ

भण्डार, भण्डारकर रिसर्च इंसटीट्युट, पूना व कारंजा का जैन भण्डार अपना ऐतिहासिक महत्त्व रखते हैं। जिन विद्वानों ने इन चरित काव्यों को खोजकर प्रकाश में लाने का कार्य किया उनमें—सर्व श्री चिमनलाल डाह्या भाई दलाल, पाण्डुरंग गुणे, मुनि जिन विजय, आदिनाथ उपाध्ये, नाथूराम प्रेमी, डॉ हीरालाल, डॉ परशुराम वैद्य, लालचन्द गाँधी, डॉ जगदीश चन्द्र जैन और डॉ अल्सडोर्फ आदि प्रमुख हैं।

उक्त ग्रंथ हनुमान जी से सम्बन्धित है, जो कि वानर वंशी थे। 'वानर वंश' और हनुमान जी के सम्बन्ध में अनेक विचित्र बातें विभिन्न ग्रन्थों में कही गयी हैं। उन पर भी यत्किंचित विचार कर लेना समीचीन होगा।

रामायण में निर्दिष्ट 'वानर' विद्या, बुद्धि, ज्ञान, कला, ऐश्वर्य, सम्पत्ति, राज्य, भोग, वल, चातुर्य, राजनीति आदि गुणों में किसी भी मानव जाति से कम न थे। इन लोगों का राज्य किष्किधा में था एवं बालि सुग्रीव एवं अंगद इनके राजा थे। हनुमान सुग्रीव के प्रमुख अमात्य थे। रे० फा० कामिल बुल्के के अनुसार, "वानर विंध्यप्रदेश एवं मध्य भारत में अनार्य जातियाँ थीं। छोटा नागपुर में रहनेवाली उराओं एवं मुण्डा जातियों में आज भी तिग्गा, हलमान, बजरंग, गड़ी नामक गोत्र प्राप्त हैं—जिन सबका अर्थ 'वानर' ही है। यही नहीं सिंहभूमि की भुईयाँ जाति के लोग आज भी अपना वंश 'पवन' अथवा 'हनुमत्' से वताते हैं (रामकथा—का० बुल्के, पृष्ठ १२१-१२२)।

पुराणों में वानरों को हरि नामांतर दिया गया है एवं उन्हें पुलह एवं हरिभद्रा की संतान बताया गया है। ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसार पुलह ऋषि की बारह पत्नियाँ थीं जिनके नाम-हरिभद्रा, मृगी, मृगमंदा, इरावती, भूता, कपिशा, दंष्ट्रा, ऋषा, तिर्या,

श्वेता, सरमा व सुरसा था (ब्रह्माण्ड ३-७. पृष्ठ १७१-१७३)। इसमें से हरिभद्रा की संतति में वानर, गोलांगुल, नील, द्वीपिन्, मार्जार, तरक्षु तथा किन्नर का उल्लेख किया गया है। हरिभद्रा से उत्पन्न होने के कारण ही 'वानरों' को 'हरि' नामान्तर प्राप्त हुआ। इसी प्रकार ब्रह्माण्ड पुराण में वानरों के प्रमुख ग्यारह कुलों—द्वीपिन्, शरभ, सिंह, व्याघ्र, नील, शल्पक, ऋक्ष, मार्जार लोहास, वानर, मायाव—का भी उल्लेख है (३.७. १७६; ३२०)।

कई विद्वानों के अनुसार हनुमान कृषि सम्बन्धी एक देवता थे जो संभवत: वर्षाकाल में उत्पन्न हुए थे और वायु के अधिष्ठाता थे। इसीलिए वैदिक मंत्रों में उन्हें मरुत् देवता के रूप में स्मरण किया गया है। इसीलिए वायु पुत्र होने के कारण, ये कामरूपधर (आकाशगामी) हैं। आठवीं शताब्दी तक हनुमान जी रुद्रावतार माने जाने लगे एवं इनके ब्रह्मचर्य पर ज़ोर दिया जाने लगा। बाद में महावीर हनुमान का सम्बन्ध प्राचीन यक्षपूजा (वीरपूजा) के साथ जुड़ गया एवं बल एवं वीर्य के देवता के नाते इनकी लोकप्रियता एवं उपासना व्यापक होती गई। आनन्द रामायण के अनुसार तो पृथ्वी के सभी वीर हनुमान के अवतार हैं—

'ये ये वीरास्त्वत्र भूम्यां वायुपुत्रां शरूपिण:'

इस प्रकार भारतीय साहित्य के इस उज्ज्वल चरित्र को विभिन्न धर्मावलम्बियों ने अपनी धार्मिक मान्यताओं के आधार भूमियों से इसे देखा परखा और आँका है। जहाँ बाल्मीकि रामायण में शौर्य, चातुर्य, बल, धैर्य, पाण्डित्य, नीति एवं पराक्रम आदि दैवी गुणों का आलय कहा गया है—

शौर्यं, दाक्ष्यं, बलं, धैर्यं, प्राज्ञता, नय साधनम्।
विक्रमश्च, प्रभावश्च हनुमति कृता लया:॥

(व. रा. उ. ३५.३)

वहाँ उन्हें विनम्रता, निरभिमानता, दीनता, वाणी की मनोहारिता आदि सत्त्वगुणों से विभूषित भी किया गया है। इस प्रकार भारतीय महाकाव्यों में रामायण, महाभारत के अतिरिक्त पद्मपुराण, नारदपुराण, शिवपुराण, ब्रह्माण्डपुराण तथा रामचरितमानस में हनुमान के चारु चरित्र का सुन्दर निरूपण किया गया है।

जैन धर्म ग्रन्थ पद्मपुराण के आधार भूमि पर लिखा गया कवि ब्रह्मराय जी का 'बज्राङ्गबली हनुमान', एक सुन्दर चरित काव्य है। इसमें हनुमान के सम्पूर्ण विराट व्यक्तित्व को ही नहीं उनकी उज्जवल वंश परम्परा और पूर्वजों की जीवन कथा को भी विवेचित किया है। वे कुलीन वानरवंशी धीरोदात्त नायक हैं। न्याय, नीति, धर्म, दर्शन के आख्याता और सुख शान्ति के प्रदाता हैं। आपका बल, पराक्रम और तेज आश्चर्यमयी घटनाओं से पूर्ण है और चरित्र सर्वांग से ध्येय, शिक्षणीय तथा अनुकरणीय है। उक्त ग्रन्थ वर्णनात्मक है। कथा इसकी पौराणिक है और विभिन्न प्रकरणों में विभाजित है। कहीं कहीं-असम्बद्ध घटनाओं का भी वर्णन है किन्तु अनेक वस्तुओं परिस्थितियों और भावों के संक्षिप्त एवं स्वाभाविक वर्णन सहज ही सराहनीय हैं। उक्त काव्यग्रन्थ में निरूपित प्रकृत-चित्रण और वैराग्य प्रकरण बहुत सुन्दर बन पड़े हैं।

भाषा ब्रज है। ग्रन्थ में यूं तो सभी रसों का सम्यक् निरूपण हुआ है, किन्तु वीर, शृंगार और शान्ति रस (भक्ति रस) की प्रधानता है। परम्परा के अनुसार नगर, वन, पर्वत, वाटिका ऋतु, विवाह, युद्ध, संयोग, वियोग आदि के उत्कृष्ट वर्णन और हिमालय, महेन्द्रपुर तथा मानसरोवर आदि के मनोहारी दृश्य अत्यधिक मोहक बन पड़े हैं। इसका उद्देश्य चतुर्वर्ग में से जैन

धर्म-दर्शन अथवा लोकधर्म का प्रतिपादन ही है। उक्त ग्रन्थ प्राचीन है (१६१६) अतएव इसको उसी काल की काव्य-कला के मापदण्ड पर नापना उचित होगा। ग्रन्थकार ने जिस भक्ति भावना से प्रेरित होकर इस धर्म ग्रंथ का प्रणयन किया है यदि उसी भूमि पर उतरकर विज्ञ पाठक पठन-पाठन करेंगे तो उन्हें उस अलौकिक परमानन्द का आभास अवश्य होगा, जिस उद्देश्य से इसकी रचना हुई है। विश्वास है, धर्म प्राण प्रेमियों के बीच कवि ब्रह्मराय जी का यह ग्रन्थ विशेष श्रद्धा का अधिकारी होगा।

प्रस्तुत ग्रन्थ को प्रकाश में लाने का सारा श्रेय पंडित कमल-कुमार जी को है जो अध्ययनशील खोजी प्रवृत्ति के पारखी पंडित हैं। साथ ही कविवर फूलचन्द जी 'पुष्पेन्दु' के परिश्रम की भी प्रशंसा कहे बिना न रहूँगा जो भाषाविद् और साहित्य रसिक ही नहीं 'मिशन स्प्रिट' से कार्य करने वाले विद्वान् हैं। ये दोनों विद्वान साधुवाद के अधिकारी हैं जिन्होंने मुझे कुछ कहने के लिए सभी पाठकों के सामने ला खड़ा किया। प्रस्तुत काव्य ग्रन्थ अपने पाठकों के हाथों में देकर मैं निश्चित हूँ। मुझे विश्वास है, जैन-धर्म के स्वीकृत सिद्धान्तों के आधार पर निर्मित यह ग्रन्थ पाठक प्रेमियों में एक नई प्रेरणा और शक्ति देने में समर्थ होगा :—

'ज्योतिः शूर पुरस्कृधि'
(हे वीर ! आगे हमें ज्योति प्रदान करो)

—चारुचन्द्र द्विवेदी

६, जुलाई १९७३.

प्रवक्ता, हिन्दी-विभाग
कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
खुरई, सागर (म० प्र०)

प्रस्तुत परिचय 'आत्मायन' से लिया गया है। आत्म-कथा को ही मेरी श्रद्धा व निष्ठा आत्मायन कहती है। यह आदर्श पवित्र-आत्म-कथा स्वय शीर्षक नायक द्वारा लगभग तीन सौ पृष्ठों मे लिखी गई है। अपने जीवन भर की ज्ञानानुभूतियाँ उन्होंने डायरियों और बहियों मे अभिव्यक्त की है, क्योंकि व्यर्थ की वाचालता से वे निरन्तर बचते थे—दूर रहते थे।

वस्तुत: उनके जीवन का प्रत्येक क्षण सच्चे देव, शास्त्र, गुरुओं के चरणों में समर्पित था। उदासीनता व्रत सयम-प्रतिमा आदि यदि उनके क्रमिक जीवन-सोपान थे तो समाधि मरण उनकी मजिल। इस पुनीत मंजिल पर उन्होंने २४ नवम्बर सन् १६७२ को सफलता पूर्वक पदार्पण किया। एक संत का मरण महोत्सव जिस धूमधाम और उल्लास के पावन वातावरण में निष्पन्न होना चाहिये वह सब खुरई नगर की जैना-जैन

जनता द्वारा सादर अभिनन्दित हुआ।

उनकी मानव-पर्याय के प्रारम्भिक २५ वर्ष छोड़ दीजिये शेष ४७ वर्षों का प्रत्येक क्षण किस प्रकार व्यतीत हुआ? उदाहरण के लिये उसकी एक झलक उन्हीं की डायरी के पन्नों में से :—

माघ कृ० १० बुध ६८ वि० २४-१-६८ खुरई

प्रातः ४ बजे जागरण। मेरी भावना, सामायिक-पाठ, सूत्र पाठ संग्रह, कल्याणालोचना, बारह भावना, प्रतिक्रमण, भक्ति। ६ बजे प्रातः स्नान। बडकुल जिन मन्दिर में अभिषेक-वन्दन-पूजन-स्वाध्याय। मलैया जिन मन्दिर में भी तथावत्। नवीन एवं प्राचीन दि०जैन मन्दिरों में भी क्रमशः उपरोक्त पुनरावृत्ति। साढ़े दस बजे घर वापिस। शुद्धि के उपरान्त १२ बजे भोजन तदुपरान्त ढाई बजे तक सामायिक। साढ़े तीन बजे तक स्वाध्याय करके उसे कापी में दर्ज किया। पाँच बजे सायँकाल प्रतिक्रमण। ६ बजे से साढ़े नौ बजे तक नये मंदिर जी में क्रमशः सन्ध्या-सामायिक-शास्त्र-श्रवण। घर वापिसी रात्रि १० बजे। तदन्तर डायरी लेखन। रात्रि ११ बजे शयन। समाप्त। ॐ शान्तिः। ॐ शान्तिः। ॐ शान्तिः।

उनकी यही समय सारिणी थी। नर-भव की सार्थक सिद्धि के लिये वे आजीवन निरन्तर जागरूक और सचेष्ट रहे। नैतिकता-मानवता-धार्मिकता एवं आत्मिकता का क्रम न केवल उनकी दार्शनिकता में ही समाया रहा बल्कि पूर्ण रूपेण प्रतिक्षण उनके व्यवहारों में भी यथावत्प्रयुक्त होता रहा।

संत समागम एवं मुनि भक्ति के लिये तो ये सब कुछ करने को तत्पर रहते थे। क्योंकि मुनिधर्म को ही इन्होंने मानवता का उत्कृष्ट आदर्श मानकर अपना लक्ष्य बिन्दु केन्द्रित किया था। यही कारण है कि इन्होंने अपने युग के यावत् दि० जैन

मुनियों के दर्शन-वंदना-वैयावृत्य करके उनके संक्षिप्त जीवन चरित्र प्रवचनों सहित अपनी डायरियों में लिपिबद्ध किये हैं। खुरई नगर के स्थानीय चातुर्मासों के दैनिक विस्तृत लेखाङ्कन में पृष्ठों के पृष्ठ रंगे पड़े हैं। इनमें से सन् १९६३ में सम्पन्न पूज्य श्री १०८ धर्मसागर जी महाराज का ससंघ चातुर्मास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इन्हें ही श्री बालचन्द्र जी ने अपनी ७ वीं प्रतिमा ग्रहण का दीक्षा गुरु स्वीकार किया था। इसके पूर्व वे दूसरी प्रतिमा धारण किये हुए थे। बीच की प्रतिमाओं के पथ पर तो अभ्यास रूप से वे क्रमशः अग्रगामी थे ही। सन् १९५१ में सम्पन्न पूज्य मुनि १०८ श्री समन्तभद्र जी महाराज (दक्षिण) के खुरई चातुर्मास से भी ये नितान्त प्रभावित थे।

असल में इनके जीवन का मोड़ सन् १९३१ में सम्पन्न श्री १०८ सूर्यसागर जी महाराज के ससंघ खुरई चातुर्मास से तथा पूज्य श्री शान्तिसागर जी छाणी के दर्शन से प्रारम्भ हुआ। तभी से उन्होंने अपने पूर्व कुसंस्कारों को तिलाञ्जली देकर अपने भावी अमूल्य जीवन को संयम-पथ पर आगे बढ़ाया। तभी गुरहा वंश भूषण श्री १०५ ऐलक विशाल कीर्ति जी महाराज के ब्रह्मचारी दीक्षा प्रसंग ने इन्हें सबसे अधिक प्रेरणा दी और इनका जीवन आत्मावलोकन, आत्मनिरीक्षण, सामायिक प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, वंदन, अर्चनादि के स्वर्णिम साँचे में ढल गया। सर्व श्री १०८ आचार्यवर शान्तिसागर जी, शिवसागर जी, आनन्दसागर जी आदि सभी मुनियों के समागम में ये यथा समय रह कर लाभान्वित होते रहे। पूज्यवर्णी वजी के जीवन-दर्शन से भी ये अत्यन्त प्रभावित रहे। वैयावृत्य, आहार व्यवस्था और भक्ति द्वारा श्री मुनियों के मूल गुण ग्रहण करने के लिये ये सदैव लालायित रहते थे। पूज्य आचार्य श्री शान्ति सागर जी महाराज के अन्तिम समाधिमरण संदेश का पाठ तो

ये नित्य ही करते थे। अस्तु

भारत के सभी छोटे बड़े तीर्थों की वंदनाएँ इन्होंने सपरिवार तथा एकाकी बीसों बार की हैं। पंच कल्याणक प्रतिष्ठा मेले, चातुर्मास समारोह, शिविर आदि कदाचित् ही कभी कोई छूटे हों। इन सब का विस्तृत वर्णन उनकी डायरियों में भरा पड़ा है। एक २ विद्वानों के प्रवचनों के सारांश कापियों में लिपिबद्ध है। नगर के प्राय: सभी धर्मानुरागी बन्धुओं और विद्वानों के शुभ नाम श्रद्धापूर्वक लिखे गये हैं। देश के समस्त युगीन नेता श्री विनोबा भावे आदि के संक्षिप्त परिचय लिखकर तथा तत्कालीन परिस्थितियों का चित्रण कर इतिहास की ओर इन्होंने अपनी रुचि प्रकट की है। अपनी लेखनी द्वारा उन्होंने जीव मात्र के साथ २ परिचय में आने वाले सभी सज्जनों के नाम लिख-लिख कर बार २ क्षमा याचना की है।

जीवन के प्रारम्भिक पृष्ठों में इन्होंने अपना जन्म स्थान डुगासरा (जिला सागर), जन्म काल सन् १९०० ई०, पूज्य पितामह श्री गिरधारीलाल जी, पूज्य पितु श्री गुलाबचंद जी निरूपित किये हैं। प्रारम्भिक शिक्षा दीक्षाओं के स्थान क्रमश: गढ़ाकोटा, सागर तथा खुरई रहे हैं। लौकिक शिक्षा का अंत मैट्रिक परीक्षा की अनुत्तीर्णता में होता है क्योंकि तभी ये सं० ७८ में पितृविहीन होकर विक्षिप्त से हो गये थे। आर्थिक विपन्नता और कठोर-दुस्तर उत्तरदायित्वों ने उन्हें किंकर्त्तव्य विमूढ़ सा बना दिया था। वे तो इनकी पूज्य मातेश्वरी ही थीं जिन्होंने आजीवन परम स्वावलम्बिनी रह कर स्वयं आजीविकोपार्जन करके इनकी गृहस्थी को यथावत् टिकाये रखा। पुण्योदय से चरित्र नायक द्वारा अंगीकृत वैद्यक व्यवसाय चमका, सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ी और फलस्वरूप धर्म की प्रगाढ़ रुचि जागृत हुई। संतति प्राप्ति में यद्यपि दस की संख्या इन्होंने

गिनाई तथापि केवल पाँच ही इस लोक में विद्यमान हैं।

उपरान्त के पृष्ठों में जगह २ इन्होंने अपनी सहधर्मिणी श्री लाड़ली जी की निरक्षरता, सरलता, और मंद कषाय की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इनके क्षीण शरीर ने सदैव ही इनकी आत्मा के साथ धोखा दिया। आत्मा ने भी उसकी घोर उपेक्षा की। उसे कभी भी भोगासक्ति के लिये प्रयुक्त नहीं किया गया बल्कि व्रत-संयम उपवासादिक द्वारा कृश करके उसकी बाह्य असुन्दरता को आन्तरिक-सौन्दर्य के बल से तेजस्विता में परिणत कर दिया। शीत और वात जन्य बीमारियाँ तो वर्ष में आठ २ महीने इन्हें संयम पथ से डगमगाने के लिये आती रहीं परन्तु मरते दम तक भी इनकी चैत्य-वंदना, सामायिक प्रतिक्रमण आदि दैनिक क्रम छूटा नहीं। एक रोग तो इतना जबरदस्त हठी और दुखदाई था कि सन् ३७ से पीछे पड़ा तो लगातार सन् ६७ तक छाया की भांति निरन्तर साथ ही रहा आया। उसकी तीव्र वेदना से देखने वालों के हृदय भी प्रकम्पित हो जाते थे परन्तु भुक्त भोगी श्री बालचन्द्र जी भेद-ज्ञान के बल से ही सदैव उस परीषह को जीत कर उसकी घोर उपेक्षा करते रहे।

औषधोपचार न तो इस रोग का कहीं हो सकता था और न करवाया ही इसलिये कि भारत के सभी डाक्टरों ने इसे लाइलाज घोषित कर दिया था। वह रोग था जबड़े की नसों में वायु विकार का भर जाना। इसकी तीव्र वेदना ने इन्हें कई बार विक्षिप्त भी कर दिया परन्तु संयम बल ने उसे चुनौती जो दे रखी थी। अन्ततोगत्वा ४० वर्ष के बाद आहार-विहार के इसी संयम ने उसे धराशायी कर ही दिया।

डायरी के ये पृष्ठ इतने महत्त्वपूर्ण नहीं जितने कि चारों अनुयोगों के आधार पर उनकी स्मृति और धारणा द्वारा लिखे

गये आत्मानुभव और आत्मोत्थान के सैकड़ों पृष्ठ हैं। सारा जैनागम अध्यात्म के दर्शन सहित उनमें भरा हुआ है।

सारांशतः इनके संयम-मार्ग ने जहां इनके नोकर्म जन्य शरीरादिक की अस्वस्थता पर विजय पाई वहां यथा संभव द्रव्य कर्मों के विपाक को रस हीन किया तथा भाव कर्मों के उदय को स्वभाव लीन किया। संयम मार्ग ने ही उनकी कीर्ति और प्रतिष्ठा को "बालचंद्र" की धवल ज्योत्स्ना के समान आलोकित कर दिया। अन्तिम छः वर्षों से तो इन्होंने अपना सारा समय सम्यक् ज्ञान दान में न्यौछावर कर दिया। मंदिरों में जाकर जैन सिद्धान्त प्रवेशिका की प्रौढ़ महिला कक्षाओं को ये स्वयं लेते थे। उन्हीं के चरणों का अनुकरण करते हुए उनके पुत्र द्वय श्री फूलचंद जी पुष्पेन्दु तथा वैद्य बाबूलाल जी भी यहाँ बाल वीतराग विज्ञान पाठशालाओं में अपना प्रारम्भिक ज्ञान-दान देते हुए उनकी स्मृति को अक्षुण्ण रखे हुये हैं। उनके द्वारा सौंपी हुई लिखित रत्नत्रय निधि को ये युगल बन्धु अक्षुण्ण सुरक्षित रखते हुए कामना करते हैं कि उनका भी भावी जीवन संयम मार्ग पर नहीं; तो कम से कम ज्ञान मार्ग पर ही चलता रहे।

श्री बालचंद जी वैद्य सम्यक्त्वी थे या नहीं यह या तो केवली सर्वज्ञ जानते हों अथवा स्वयं चरित नायक ही; परन्तु लोक जब उन्हें व्रती श्रावक के नाम से पुकार रहा है तो मेरी श्रद्धा उन्हें सम्यक्त्वी क्यों न मानें ? अस्तु :—

पूज्य जनक श्री की स्मृति में "बजांग्रबली हनुमान" के प्रारम्भिक पृष्ठों में श्री बालचंद जी का संक्षिप्त परिचय इसलिये प्रकाशित कराया गया है कि उन्होंने ही मुझे इसे लिखने की प्रेरणा दी थी। और इसलिए यह ग्रंथ उन्हें ही समर्पित है। इति शुभम्।

पं० कमल कुमार जैन शास्त्री
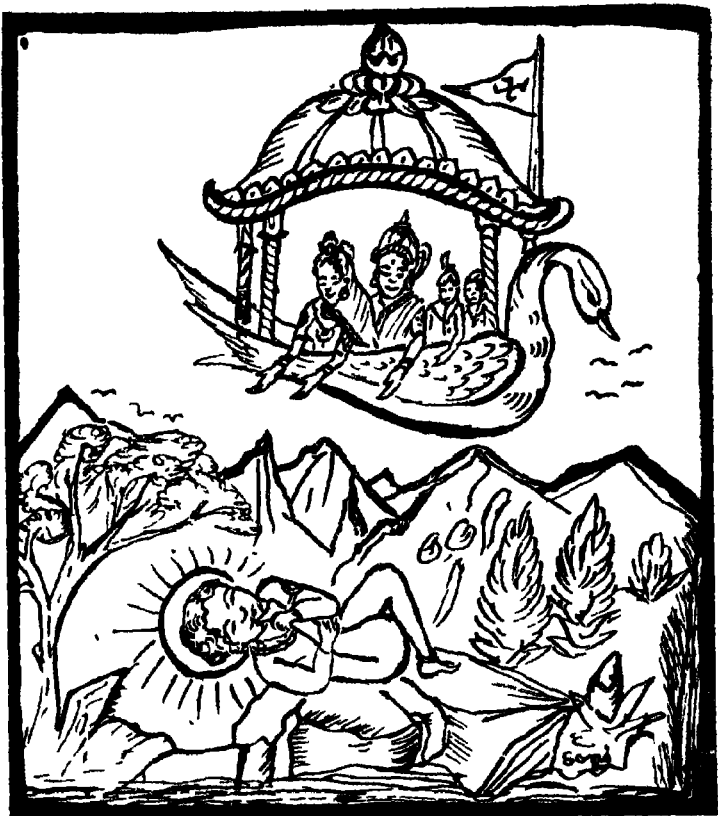
सती अंजना अंशुभोदयवश, बीहड़वन में आई।
दर्शन कर मुनि अमित गती के, मन में धीरज लाई॥
चारण मुनि ने दिव्य ज्ञान से, भूत-भविष्य बताया।
हो बलशाली पुत्र तुम्हारे, शुभ सन्देश सुनाया॥
मुनि बिहार कर गये गगन में, यहां सिंह इक आया।
अष्टापद बन 'मणीचूल' ने [के हरि तुरत भगाया॥
जन्म हुआ श्री हनूमान का, अंजनि हर्ष मनाया।
देवों ने भी मधुर स्वरों से मंगल गीत सुनाया॥

विषय-क्रम

—:—

श्री हनुमन्ताष्टक स्तोत्रम्

(१)

स सं सं सिद्धनाथं, प्रणमति चरणं, वायु-पुत्रं च रुद्रं ।
तं तं तं दिव्यरूपं, मह मह हसितं, गर्जितं मेघनादं ।।
तं तं तं त्रिलोकनाथं, तपति दिनकरं, तं त्रिनेत्रं-स्वरूपं ।
रं रं रं रामदूतं, रणरंग रमितं, रावणं छेदनाथ ।।

(२)

वं वं वं बालरूपं, प्रोत्थित गिरिवरं, ज्ञापितं सूर्य-बिम्बं ।
मं मं मं मन्त्रसिद्धं, शुभकुलतिलकं, मर्दनं शाकिनिनां ।।
हूँ हूँ हूँ हूँकार बीजं, हनति हनुमतिं, हन्यतं शत्रु-सैन्यं ।
द्रं द्रं द्रं दीर्घरूपं, दुर्धर शिखरं, घातितं मेघनादं ।।

(३)

ऊँ ऊँ ऊँ उच्चाटितं, तं सकल भुवतलं, योगिनी वृन्दरूपं ।
क्षं क्षं क्षं क्षिप्ररूपं, क्रमत्युधिपरं, ज्वालितं लङ्क-कोटं ।।
छं छं छं छिन्दि तत्त्वं, दनुरुह कुलकं, मुञ्चितं बुम्बकारं ।
किं किं किं कालदृष्टं, जल-निधि तरणं, राक्षसं देवदैत्यं ।।

(४)

वृं वृं वृं वृद्धि सृष्टं, त्रिभुवन रचितं, दैत्यं तं सर्वभूतं ।
देवानां क्षत्रि मूर्ति, त्रिपणि भुवधरो, पावकं वायु रूपं ।।
त्वं त्वं त्वं वेदतत्त्वं, तुहि तुहि रटितं, सार्थं बाणं स्वरूपं ।
चं चं चं चरम शरीरं, अतुलित बलवीरं, बज्राङ्ग विदितं ।।

(५)

ॠं ॠं ॠं ॠन्द नत्वं, ननु कमलतले, राक्षसं रौद्ररूपं ।
ह्राँ ह्राँ ह्राँ त्राटि तत्त्वं, गुणगण सहितं, भैरवो यक्षभूतं ॥
श्रीं श्रीं श्रीं साधुरूपं, उत्कट-तट-कलं तन्त्ररूपं स्वरूपं ।
क्लीं क्लीं क्लीं कार रूपं, न भवति दरिद्रं, व्याधि संताप शोकं ॥

(६)

वं वं वं वानरत्वं, वनगिरि सहितं, वास तन्त्रीस लोकं ।
अं अं अं साक्ष्यनन्तं गुणगणा गणितं, नास्ति रूपं स्वरूपं ॥
उत्पाटं मेरुश्रृङ्गं यम दिशि गमितं उर्वसी लक्ष्मणत्वं ।
वं वं वं खड्ग हस्तं, तपत भुवितलं, त्रोटितं नागपासं ॥

(७)

एँ एँ एँ कार रूपं, त्रिभुवन पठितं, वोधि मंत्राधि मन्त्रं ।
तं तं तं कोपितं च, दिपति दिनकरं, पर्वतं वज्रहस्तं ॥
दं दं दं दलनं, कर-नख विदरं, रौद्ररूपं करालं ।
भं भं भं भव-भयहरणं जगच्छरणं त्रिकालं ॥

(८)

संग्रामे शत्रुमध्ये, जलनिधि तरणे, व्याघ्र सिंहे च सर्पे, ।
राजद्वारे च मार्गे, गिरिगुह विवरे, निर्झरे कन्दरे वा ॥
भूते प्रेतेषु सर्वं ग्रहगुण विषमे, शाकिनि योगिनिनां ।
विस्फोटं च ज्वराणां, हनति हनुमन्तं, मोह रुद्रं नितान्तम् ॥
पठनाच्छ्रवणात् जाप्यात्सिद्धिर्भवति वांछिताः ।
निष्कामना भवंत्येवं दुर्लभं परमं पदम् ॥

इति श्री हनुमन्ताष्टकं सम्पूर्णम्

वज्रांगबली वीर हनुमन्
मंत्र-स्तोत्रम्

ॐ ह्रीं नमो भगवते वज्राङ्गबली वीर हनुमते प्रलयकालानलप्रभा-प्रज्ज्वलनाय, प्रताप वज्र देहाय, अञ्जनीगर्भसंभूताय-प्रकट विक्रमवीर दैत्यदानवयक्ष रक्षोगण ग्रहबंधनाय, भूतग्रह बंधनाय, प्रेतग्रह बंधनाय, पिशाचग्रहबंधनाय-शाकिनी डाकिनी ग्रह बंधनाय, काकिनीग्रहबंधनाय, ब्रह्मग्रह बंधनाय, ब्रह्मराक्षसग्रह बंधनाय, चौरग्रहबंधनाय, मारीग्रह बंधनाय, एहि एहि आगच्छ आगच्छ आवेशय आवेशय मम हृदये प्रवेशय प्रवेशय स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर-सत्यं कथय व्याघ्रमुखबंधन, सर्पमुखबंधन-राजमुख बंधन, नारीमुख बंधन, सभामुख बंधन, शत्रुमुखबंधन, सर्वमुख बंधन-लंकाप्रासाद भंजन, अमुक (नाम) मे वशमानय, क्लीं क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं राजानं वशमानय। श्रीं ह्रीं क्लीं स्त्रीन् आकर्षयश शत्रून मर्दय मर्दय मारय मारय चूर्णय चूर्णय खे खे श्री रामचन्द्राज्ञया मम कार्यसिद्धि कुरु कुरु ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः फट् स्वाहा। विचित्र वीर हनुमन् मम सर्वशत्रून् भस्मीभूतानि कुरु कुरु हन हन हुँ फट् स्वाहा।

एकादश शतवारे जपित्वा सर्वशत्रून् वशमानयेति-नान्यथा ॥

कामदेव, तद्भवमोक्षगामी

अञ्जनीपुत्र "वीर हनुमान" जन्म कुंडली

बृहत जैन शब्दार्णव पृष्ट नं० २१५

مطبوعہ پنا لعل آرٹسٹ-۱۹۸۳-اشوکنگر-نودہلی

वज्राङ्गबली हनुमान जी की जन्म-लग्न का फलितार्थ
लेखक :—ज्योतिषाचार्य श्री त्रिलोकीनाथ जैन
धर्मपुरा देहली

हमारे बहुचर्चित चरित-नायक वीर वज्राङ्गबली हनुमान जी की जन्म-लग्न की मीन राशि है। मीन राशि में शनि, शुक्र और बुध ग्रह स्थित हैं। शुक्र ग्रह उच्च राशि में है। बुध ग्रह नीच राशि में है। मीन-राशि जल राशि है। शुक्र, शनि और बुध ग्रह तीनों परस्पर में अभिन्न मित्र हैं। लग्नेश गुरु उच्च

राशि वाला है कर्क राशि पंचम में विद्यमान है। लग्न को नववीं दृष्टि से गुरु से शुभता दे रहे हैं।

जिन मनुष्यों के जन्म-लग्न में उच्च के शुक्र हों और उच्च के गुरु से देखे जाते हों—उनका शरीर बज्र के समान अत्यन्त पुष्ट-बलिष्ठ और मजबूत होता है। वे अपने शरीर से विविध अद्भुत चमत्कार दिखाने वाले, अनुपम सुन्दर शरीर को धारण करने वाले, आकर्षण युक्त कामदेव को जीतने वाले परम सौभाग्य-शाली होते हैं।

केन्द्र स्थान में शुक्र उच्च राशि में या स्वराशि में अथवा मूल त्रिकोण राशि में हो तो मालव्य योग बनता है।

चरित नायक की इस जन्म कुंडली में शुक्र तृतीय स्थान का स्वामी और अष्टम स्थान का स्वामी होकर लग्न में उच्च का है, जो अत्यन्त उच्च कोटि के पराक्रम के कार्य करवाने के लिये तथा विदेशों की यात्रा कराने के लिये योग बनाता है तथा शरीर द्वारा उच्चतम कठिन कार्य सम्पन्न कराने से मान-प्रतिष्ठा दिलाकर बैजयन्ती माला धारण कराता है।

शुक्र भी एक ऐसे आचार्य थे जिन्हें बहुत सी गुप्त विद्याएँ सिद्ध थीं। यहां भी (चरित नायक श्री हनुमान जी के जन्म लग्न के) गुप्त स्थान के स्वामी शुक्र है और लग्न में हैं अतः इनके शरीरको भी बहुत सी गुप्त विद्याएं सिद्ध होनी चाहिये।

शुक्र तो उच्चता को प्राप्त है ही लेकिन शुक्र ग्रह में और भी शक्तियां काम कर रही हैं यह ध्यान देने योग्य है।

मेष राशि में सूर्य है, वृश्चिक राशि में केतू है ये दोनों उच्च स्थानी हैं। मेष और वृश्चिक राशि का स्वामी मंगल है। मंगल में सूर्य और केतू ग्रह के गुण विद्यमान हैं मंगल वृष राशि में राहु सहित है। वृष राशि का स्वामी शुक्र है। शुक्र में मंगल,

राहु, सूर्य और केतू ग्रह के गुण हैं।

शुक्र उच्च का होकर सूर्य की भाँति अद्‌भुत पराक्रम रूपी प्रकाश को फैलाये और अकस्मात् ही विजय लाभ हो जाये—ऐसा शुभ संकेत शुक्र ग्रह दे रहा है।

बुध ग्रह नीच राशि में लग्न में स्थित है। यहां श्री हनुमान जी की जन्म कुण्डली में बुध ग्रह का नीचत्व भंग हो रहा है। नीचत्व ग्रह की नीच राशि का स्वामी लग्न से—चन्द्रलग्न से केन्द्र त्रिकोण में हो, अपनी राशि में गये नीच ग्रह को देखता हो तो नीच योग (निम्न श्रेणी का योग) भंग होकर उच्च फल प्राप्त होता है।

बुध ग्रह चतुर्थेश सप्तमेश भी है। चतुर्थ से—चतुर्थ सुख से भी परम सुख को प्राप्त कराने के लिये बुध ग्रह अपने मित्र उच्च के शुक्र से योग बना रहा है और अपनी उच्च राशि ६ (कन्या) को सप्तम दृष्टि से देख रहा है।

शनि ग्यारहवें और बारहवें स्थान का स्वामी है। जो अपने मित्रों के साथ बैठकर जातक के शरीर को दुःख उठाने के लिये संकेत कर रहा है। लग्न में बुध, शुक्र, शनि ग्रह है। इन तीनों में बुध ग्रह की गति अति तीव्र है। उससे कम शुक्र की और शुक्र से कम गति शनि ग्रह की है। बुध ने अपने गुण शुक्र को, शुक्र और बुध ने अपने गुण शनि को दे दिये अतएव शनि ग्रह की लग्न में प्रधानता हो गई। शनि में सूर्य, मंगल, शुक्र बुध राहु और केतू ग्रहों के और स्वयं के गुण विद्यमान हैं। मीन राशि में होने से उसने समस्त गुणों को लग्नेश गुरु को प्रदान कर दिये। कर्क राशि गत गुरु ने अपने गुण और सूर्य मंगल बुध शुक्र शनि राहु केतू के गुण चन्द्र ग्रह को दे दिये अस्तु अब चन्द्र ग्रह मकर राशि का है। मकर राशि का स्वामी शनि है।

चन्द्र ने अपने गुण और समस्त ग्रहों के गुण शनि को प्रदान कर दिये। शनिग्रह चन्द्र अधिष्ठित राशि का स्वामी है अतः इस कारण से शनिग्रह और भी अधिक बलवान हो रहा है। लग्न में शनि ग्रह बैठकर कह रहा है कि मैं स्वयं अत्यन्त दुखों का कारण हूँ इसलिये जातक के शरीर को विविध विपत्तियों और महान कष्टों से संघर्ष करना पड़ेगा !

वास्तव में यही एक ऐसा ग्रह है जो मनुष्यों को अधिक कष्ट देता है और यदि उसमें शुभता आजाये तो जातक को कष्ट देकर उसकी अग्नि परीक्षा कराकर स्वर्ण को विशुद्ध कुन्दन बनाकर उसको मुक्ति प्राप्ति का मन्मार्ग दर्शन कराता हुआ परमपद अर्थात् सर्वोच्च पद पर पहुँचा देता है।

मैं शनि जातक (चरित नायक श्री हनुमान जी) के लग्न में शुभ होकर स्थित हूं और मुझ पर गुरु का संकेत है कि इस जातक को मुक्ति-पथ का राही बनाना। मेरी दास वृत्ति है इसलिये मैं गुरु की आज्ञा का पालन ही करूँगा। मेरे से तथा लग्न से विजय के स्थान में मंगल राहु बैठे हैं। यह जातक प्रबल शत्रुओं को परास्त कर महान विजय को प्राप्त करने वाला परम वीर जातक होगा।

लग्न से छटवां स्थान शत्रु स्थान होता है। छटवें स्थान का स्वामी सूर्य है, वह सूर्य उच्च का है अतः ऐसे जातक (श्री हनुमानजी) के शत्रु भी उच्च के होंगे उनका प्रकाश भूमण्डल पर छाया हुआ होगा परन्तु वह शत्रु शनि शुक्र मंगल राहु के मध्य में आकर परास्त हो जायगा और अन्त में कर्म-शत्रुओं पर भी विजय लाभ करके परम-गति को महा निर्वाण को प्राप्त होंगे। जातक का लग्न, पंचम, और नवम् का त्रिकोण जल तत्त्व राशियों का है, पंचम में कर्क राशि गत गुरु है। विद्या के कारक गुरु

होते हैं। ऐसे जातक को जल संबंधी विद्याओं में दक्ष होना चाहिये। लग्नेश भी गुरु स्वयं शरीर का स्वामी जल विद्या में दक्ष होने का संकेत दे रहा है। भाग्य स्थान में बैठकर केतू जल सम्बन्धी यात्रा में भाग्य में कष्ट उठाने का संकेत देता है। केतु की लग्न और लग्नेश पर दृष्टि होने से शरीर को जल में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। गुरु की पंचम दृष्टि केतू पर होने से और मंगल की दृष्टि केतु पर होने से जल में भी विजय प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हो जाये तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। उच्च के गुरु को चन्द्र पूर्ण दृष्टि से देख रहा है जो 'गज-केशरी' योग बना रहा है। इसका फलितार्थ है हाथियों के झुंडों पर जैसे एक सिंहविजय प्राप्त करता है। इसी प्रकार यह जातक कर्म रूपी गज शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके मोक्ष को प्राप्त होगा।

जनता तथा जनता के मन का स्वामी बुध लग्न में बैठा है। बुध वाणी का कारक है। बुध बुद्धि का कारक है—प्रेम का सूचक है ऐसे बुध ने शरीर के साथ सम्पर्क कर लिया उनकी वाणी के साथ जनता रहती थी। जनता के लिये जनता की धार्मिक भावनायें बताने के लिये—विवेकशील बनाने के लिये अपने शरीर को जनता के समीप लाकर जनता से सम्पर्क स्थापित कर सत्यता की खोज करके अपने शरीर को ही सद्गति प्राप्त नहीं कराई वरन प्राणिमात्र को भी मोक्ष मार्ग पर चलने को प्रेरित किया : उनका पथ प्रदर्शन किया यह था बुध का बुद्धि फल तथा आश्चर्य जनक कार्य।

●

श्री मुनिसुव्रतनाथाय नमः

वज्रांगबली-हनुमान

अभिनन्दन

(१)

स्वामी सुव्रतनाथ जिनन्द, सुमरत होय सिद्धि-आनन्द ।
नासै पाप भली मति होय, नाय शीस जोरौं कर दोय ॥

(२)

आदिनाथ जिन सेवा करौं, मन-वच-काय चित्त उर धरौं ।
अजितनाथ वन्दौं जगसार, लहों ज्ञान पाऊँ शिव-द्वार ॥

(३)

संभवनाथ जपौं मन लाय, बाढ़े धर्म-कर्म क्षय जाय ।
नाउँ शीश अभिनन्दन देव, सुर-नर-मुनि करते पुनि सेव ॥

(४)

स्वामी सुमति देहु मति मोहि, रात-दिवस मन राखों तोहि ।
पद्मप्रभु की सेवा करौं, भव-सागर से सत्वर तरौं ॥

(५)

पुनि नमहूं जिनदेव सुपास, नाम लेत सब पूरें आस ।
चन्द्रप्रभु जिन गुनन निधान, सुमरत होंय पाप क्षय मान ।।

(६)

उज्ज्वल पहुपदन्त जिननाथ, नमौं शीर्ष धरि मस्तक हाथ ।
जिनवर शीतल वन्दौं पाँव, देहु स्वामि शिवपुर को ठाँव ।।

(७)

जिन श्रेयांस गुण जग विख्यात, स्वामी करहु करम की घात ।
वासुपूज्य गुण कहे न जाँय, शोभै लाल-वर्ण तसु काय ।।

(८)

विमलनाथ के सेऊँ पाद, निर्मल मति को देहु प्रसाद ।
जय जय स्वामी नाथ अनंत, काटे करम गये शिव-पंथ ।।

(९)

धरमनाथ वंदहुँ निर्भ्रान्ति, जासों पाप होंय सब शान्त ।
शान्ति करण वन्दहुँ जिन शान्ति, सोहै देह कनक तसु कान्ति ।।

(१०)

जय जय स्वामी जिनवर कुंथ, भूले भव्य दिखावन पंथ ।
चरन अरह जिनवर के गहौं, जातें ज्ञान-रतन मैं लहौं ।।

(११)

मल्लिनाथ सेऊँ तस पाद, मार्‍यो काम कियो जयनाद ।
मुनिसुव्रत को करहुँ बखान, जाय क्रोध माया अरु मान ।।

(१२)

जपौं देव नमि कर उल्लास, अशुभ-करम की काटो फांस ।
नेमि स्वामि वन्दौं निर्ग्रन्थ, तज तिरिया पायो शिव-पंथ ॥

(१३)

पार्श्वनाथ का वन्दन करूँ, राग-द्वेष-पातक सब हरूँ ।
वीरनाथ वंदो जग सार, राख्यौ धरम श्रेष्ठ व्यौहार ॥

(१४)

जिन चौबीस नमहुँ जगदीश, वन्दौं गणधर परम मुनीश ।
द्वीप अढ़ाई मध्य मुनिन्द, ते सब वन्दौं करि आनन्द ॥

(१५)

सरस्वती को करके ध्यान, पाऊँ निर्मल सम्यक् ज्ञान ।
मैं मूरख अति अपढ़ अजान, पंडित जन मो विनती मान ॥

(१६)

अक्षर-पद नहिं पायो भेद, लहौ न अर्थ भयो अति खेद ।
लघु जानों नहिं दीरघ मात्र, कथा कहूँ मैं "हनू" सुपात्र ॥

(१७)

स्वामिन् मो मत करौ विचार, उपजै बुद्धि होय विस्तार ।
तुम प्रसाद कर पक्ष न गहौं, "हनू" कथा वरनन कूं कहौं ॥

(१८)

बरसै मेघ अधिक असरार, सरवर ऊपर मूसलधार ।
वारि सरोवर बूंद न रहे, मेघ दोष काहे को कहे ॥

(१६)

श्री गुरु तो हैं विधि दातार, भूले मारग लावन हार ।
उन बिन फुरै न ज्ञान-विवेक, करो भले ही प्रयत्न अनेक ॥

(२०)

गृद्ध पिच्छ मुनि वन्दों येह, जाकौं सुर ले गये विदेह ।
लाज छोड़ि कर वारम्बार, हनू कथा को कर विस्तार ॥

पवन-परिचय

(२१)

जम्बु द्वीप जानै संसार, ताकी शोभा लहे न पार ।
नामे भरत क्षेत्र अति भलौ, योजन पंच छव्वीसौ कलौ ॥

(२२)

मेरु सुदर्शन योजन लाख, गजदन्ती हैं चारों पाख ।
नदी द्रहन की संख्या कहैं, सुर-नर खेचर तहँ सब रहैं ॥

(२३)

मेरु सुदर्शन दक्षिण दिशै, विद्याधर नगरी बहु बसै ।
पुर-पट्टन मन्दिर गढ़ ग्राम, दीर्घ कोट शोभै बहु धाम ॥

(२४)

नदी लाल शोभें चहुँ पास, तामैं कमल जु करें विकास ।
कूप-बावड़ी पोखर झरी, ते दीसैं निर्मल जल भरी ॥

(२५)

वन की शोभा अति विस्तार, घड़ी मुहूरत रच्यौ विचार ।
कैंथ, करोंदा, केर, करीर, नीबू, आम, छुहार गंभीर ।।

(२६)

साखू-खेर-बाँस के भिड़े, साल-सगोना-तेंदू खड़े ।
कांकर-धामन-बेर सुचंग, खिरनी-खदिर-आम्र-मातंग ।।

(२७)

चोंच, मोच, नारंग, सुरंग, एला-श्रीफल और लवंग ।
सुन्दर कटहल श्वेत कनेर, मंडप चढ़ी दाख की बेल ।।

(२८)

चोल-सुपारी है अति घनी, कृष्ण मिर्च पीपर युत तनी ।
बहु बादाम-आम्र अखरोट, बहुरि जायफल फरें समोट ।।

(२९)

फूलो मरुवो बहुत बसाय, बेल सिहारी चम्पो राय ।
जुही पांडरी अरु सिरफंद, चारु-चमेली औ मचकुंद ।।

(३०)

मोरछलो कचनार सु-बेल, चन्दन अगर सुवास सु-केर ।
केत केवड़ो बास सुगंध, भ्रमर भ्रमण करते स्वच्छंद ।।

(३१)

वरनन करत होय विस्तार, दस लख जाति कही कवि भार ।
शोभै विद्याधर को देश, गिरि पर वह पुर बसे अशेष ।।

(३२)

नगर अदितपुर सुन्दर नाम, जैसे शोभित है सुर-धाम ।
राजा राज करै प्रह्लाद, धरम ध्यान तहाँ चले अनाद ।।

(३३)

पालै परजा चालै न्याय, पुण्यवंत पुटभेदन राय ।
केतुमती घर त्रिया सुजान, गुण गंभीर रूप की खान ।।

(३४)

पुत्र एक तसु पवनकुमार, धर्मवंत बहु बुद्धि विचार ।
रूपवंत कुलवंत सुजान, राखै षट् दर्शन को ज्ञान ।।

(३५)

बसै नगर अति अधिक सु-बास, सात कोट घेर्यो चहुँ पास ।
खाई निर्मल जल से भरी, ज्यों कैलाश फिरी सुरसरी ।।

(३६)

ऊँचे मन्दिर पौर-पगार, सात खननि ऊपर विस्तार ।
चतुर चितेरे चित्रित थान, जैसे सोहै सुरग-विमान ।।

(३७)

चौपर के कई बनें बजार, बेचें पटुवो मोतिन हार ।
बने अवास उतंग अभंग, ऊपर दीखें ध्वजा उतंग ।।

(३८)

मंडप-वेदी सोहै भली, पंच वरन रतननि झलमली ।
बहुत चतेरे कियो चतेर, सोहै जेम सुदर्शन मेर ।।

(३९)

ज्ञानी मुनिवर बैठे घने, शुभ उपयोगी पातक हने ।
करहिं व्रती दशलक्षण धर्म, पालें श्रावक जन षट् कर्म ।।

(४०)

श्रावक लोग बसें धनवंत, पूजा करें जाप अरिहंत ।
उत्तरोत्तर पुण्य विकास, ज्यों अहमिन्द्र स्वर्ग-सुखवास ।।

(४१)

विद्वत् मंडल पढ़ै पुरान, श्रावक जिनवर पूजें आन ।
श्री जिनवर की करें सुभक्ति, देव-शास्त्र-गुरु प्रति अनुरक्ति ।।

(४२)

ठाँव-ठाँव वादित्र बजंत, ठाँव-ठाँव माला झूलंत ।
ठौर ठौर सिद्धान्तऽरु वेद, पढ़ै पास बूझें सब भेद ।।

(४३)

घर घर अभ्यागत सत्कार, घर घर पशु पक्षिन सों प्यार ।
घर घर मंगल होंहि विवाह, घर घर कामिनि करहिं उछाह ।।

(४४)

घर घर बिम्ब प्रतिष्ठा होय, घर घर दान देंय सब लोय ।
घर घर श्रावक देंय अहार, घर घर संधि-विनय व्यौहार ।।

(४५)

सुख संपति पालें आचार, पुण्य-पाप को करें विचार ।
राजा करै इन्द्र सम भोग, अति सुख पावें परजा लोग ।।

वरण-विमर्श

(४६)

भरत क्षेत्र उत्तम जग जान, मेरु दिशा पर वंश बखान ।
खवारसेन अति देश महंत, नगर 'महेन्द्र' तुल्य विलसंत ।।

(४७)

करै राज भूपाल महेन्द्र, जैसे स्वर्ग भोगवै इन्द्र ।
हृदवेगा तसु गृहणी नाम, रूप-कला सुर-सुन्दरि धाम ।।

(४८)

ईकोत्तर शत् पुत्र विशाल, पुत्री एक महा सुकुमाल ।
नाम अंजनी सुन्दर तासु, ताकी उपमा दीजै कासु ।।

(४९)

ज्यों सामुद्रिक लक्षण खान, त्यों राजा-गृह अंजनि जान ।
हेमाचल उपजी सुरसरी, त्यों नृप-गृह सोहै सुन्दरी ।।

(५०)

रूप-कला-लावण्य-विवेक, अर्थ पुराण अनेकानेक ।
सो व्रत पालहि बहुत विचार, पाप पुण्य जानै व्यौहार ।।

(५१)

चन्द्र-वदन अति नयन विशाल, देखी राजा यौवन बाल ।
मन में अति चिन्तातुर होय, अंजनि योग्य मिलै वर कोय ।।

(५२)

मंत्री वेग बुलाये चार, वर सुन्दरि को करहु विचार ।
वरण योग्य पुत्री अवलोक, उपज्यो मन में चिन्ता शोक ॥

(५३)

देहु ताहि जो होय सुजान, बुद्धिवंत सुरगुरू समान ।
पहिलो मंत्री बोलै येहु, यहु सुन्दरि रावण को देहु ॥

(५४)

विद्या साहस चौदह सिद्धि, भोगत अर्द्ध चक्र की रिद्धि ।
तीन खंड धरती को ईश, नर-विद्याधर अवनत शीश ॥

(५५)

विद्याधर भी संग संग फिरैं, निशि-वासर ते सेवा करैं ।
औरहि थान दीजे अंजनी, करै कोप लंका को धनी ॥

(५६)

इतनी कह वह चुप ह्वै गयो, सुमति मंत्रि तब मुखरित भयो ।
रावण योग न येहु कुमारि, सहस अष्ट दश राजा नारि ॥

(५७)

रूप-कला तें सोहै खरी, सब की जेठी मन्दोदरी ।
कन्या हो द्वादश वर्षीय, षोडस वय को है वरणीय ॥

(५८)

रावण वृद्ध अवस्था होय, निंदै लोग हँसै सब कोय ।
रावण बूढ़ो के सग गने, ताको देतौं कैसे बने ? ॥

(५९)

मेघनाद दूजे बलवंड, व्याह्यो शत्रु करै शत-खंड ।
इन्द्रजीत है लुहरो वीर, कुंभकरन की सहै न भीर ।।

(६०)

दशमुख-पुत्र भले हैं येहु, दो में जाने ताको देहु ।
सीख हमारी जो हिय धरौ, जो मन भावै सोई करौ ।।

(६१)

मंत्री 'सुमति' बात यह कह्यो, तब 'तारावन' मंत्री बोल्यो ।
इन्द्रजीत दीजे सुन्दरी, मेघनाद चित मानें बुरी ।।

(६२)

दोऊ भाई होंय विरुद्ध, दोऊ भिड़िहैं करिहैं युद्ध ।
तब कलंक अंजनि को होई, बात विचारो सब मिलि कोई ।।

(६३)

मेरी सीख करहु परमान, कनक नगर है सुन्दर थान ।
राय हिरण्य प्रभ को तहँ वास, विद्याधर बहु सेवैं तास ।।

(६४)

सुमन नाम ताके सुंदरी, जैसे इन्द्र तनी अप्सरी ।
पुत्र एक ताके घर भलो, नाम सुदामिनि सुंदर मिलो ।।

(६५)

रूप गुणन में इन्द्र समान, कामदेव को गलियो मान ।
कह्यो हमारो कीजे येहु, कुँवर सुदामिनि पुत्री देहु ।।

(६६)

तारावन के सुनियो बैन, धुन्यो शीस मीचे द्वय नैन ।
सत्य-वचन बोले तत् छिना, राजा बात सुनो मो मना ॥

(६७)

बरस अठारह गये कुमार, संयम पाले विविध प्रकार ।
अवधिज्ञान धारी मुनि कही, यही बात तुम जानो सही ॥

(६८)

पुरुष बिना जो स्त्री होय, ताको आदर करहि न कोय ।
चक्रवर्ति की पुत्री होय, प्रियतम बिन दुख पावे सोय ॥

(६९)

सत्यंजय मंत्री - इम कही, बाकों पुत्री दीजे नहीं ।
राजा बात सुनो हम तनी, उत्तम कुँवर योग्य अंजनी ॥

(७०)

आदितपुर सुन्दर सु-विशाल, करै राज्य प्रहलाद नृपाल ।
रानी केतुमती गृह भली, इन्द्र शची ज्यों जोड़ी मिली ॥

(७१)

पवनञ्जय तसु बड़ो कुमार, धर्मवंत-गुणवंत अपार ।
दिनकर सम सोहै तसु देह, सोलह कला चन्द्रमुख येह ॥

(७२)

पंडित अधिक विवेक सुजान, राखै जैन धर्म को मान ।
बहुत बात अब कहिये नहीं, पवन जोग यह पुत्री सही ॥

(७३)

यह उत्तर सत्यञ्जय दियो, राजा सुन अति हर्षित हियो ।
भली बात मंत्री तुम कही, पुत्री पवनहु दीजे सही ।।

(७४)

बोले तबहिं साथ के लोग, भलो सु-वर यह जोगाजोग ।
पुण्य प्रबल होवे जब घनो, होय सु कारज सज्जन तनो ।।

कैलाश-वंदना

(७५)

राजा बात विचारत संत, तब लों आई ऋतू वसंत ।
फूलत फरत भई वनराई, भँवरी सन्मुख सुरभी ल्याई ।।

(७६)

करे शब्द पंक्षी कोकिला, गावैं त्रिया गीत शुभ भला ।
रमै पुरुष बहु मास वसंत, करें भोग दीसें विहसंत ।।

(७७)

बैठे सभा सहित माहेन्द्र, गगन पंथ तहँ देखो इन्द्र ।
सोहे रतन विमान प्रदीप, चले देव नन्दीश्वर द्वीप ।।

(७८)

राजा चित्त विचारे बात, हम पुनि जै जै जिनवर जात ।
करें अर्चना श्री जिनराय, बाढ़े धर्म अशुभ क्षय जाय ।।

(७९)

मानुषोत्र पर्वत बिच ताहि, नर विद्याधर गमन जु नाँहि
राय महेन्द्र सबन सो कहै, नंदीश्वर को जानन चहै ।।

(८०)

गढ़ कैलाश वृहत् स्थान, आदि नाथ पहुँचे निरवान ।
कनक-रतन-हीरन तें खचे, जिन चौवीस जिनालय रचे ।।

(८१)

रत्न बिम्ब सोहैं अति भले, कोटि दिवाकर लोपैं थले ।
धनुष पाँच सै ऊँची काय, जिनवर शोभा कही न जाय ।।

(८२)

विद्याधर नर मेले घनें, करें महोत्सव जिनवर तनें ।
सबै कहैं शुभ बात विलास, चलो जात मिलि गढ़ कैलाश ।।

(८३)

रच्यो विमान रत्न-मणि जड़ौ, नगर लोग सब बारौ बड़ौ ।
गगन पंथ उड़ि चले विमान, गमन करत नहिं दीखै भान ।।

(८४)

जै जै करत तहाँ सब भये, विद्याधर कैलाशहिं गये ।
मंत्र शुद्ध धरि मस्तक हाथ, भाव भगति वंदे जिन नाथ ।।

(८५)

सपरि पहिन पीताम्बर चीर, झारी हाथ लई भर नीर ।
श्री जिनवर पर दीनी धार, जन्म-पाप प्रक्षाले क्षार ।।

(८६)

कुंकुम-केशर-चंदन गार, वर कपूर मेल्यो सब सार ।
श्री जिन चरनन पूजा करी, अगले भव को थाती धरी ॥

(८७)

राज-भोग शुभ सुरभित वास, शोभा जैसी चन्द्र-प्रकाश ।
जिन-पद आगे धरे पखार, मानो सरवर बाँधी पार ॥

(८८)

सुरभित सुन्दर सुमन मंगाय, कमल केतकी बहु महकाय ।
जिनवर चरननि आगे धरैं, पूजा मनो इन्द्र जिमि करैं ॥

(८९)

घेवर फैनी सेव छुहार, लाडू गूजा सुवरण थार ।
जिनवर-पग आगे विस्तरैं, मुकति-पंथ हित संवर करैं ॥

(९०)

प्रजुलित घृत के दीपक जये, सुवरण थार हाथ धरि लये ।
जिनवर आगे धरे उतार, मानो करम दिये सब जार ॥

(९१)

अगर-तगर कृष्णागरु धूप, चंदन मलयागिरी अनूप ।
जिनवर चरणन आगे खेय, एक ध्यान ध्याता अरु ध्येय ॥

(९२)

शीस हाथ धर वंदौ देव, गुणानुवाद पढ़ियो बहु भेव ।
जय स्वामी तुम जग उजयार, तुम संसार उतारन हार ॥

(६३)

भगति वंदना तेरी करौं, मुक्ति रमणि को सत्वर वरौं ।
नित उठि करहुँ तुम्हारी सेव, तुमकों पूजें सुरपति देव ।।

(६४)

जिनवर मोपरि करहु सनेह, कुगति कुशास्त्र निवारो येह ।
और न कछु मागहुँ तुम पास, देहु स्वामि मुझ मोक्ष निवास ।।

(६५)

कर वंदन चाले खग जान, कनक-शिला देखी शुभ थान ।
देखे विद्याधर शुभ नाम, राय महेन्द्र लियो विश्राम ।।

(६६)

धर्म तत्त्व की चर्चा करें, धर्म-पुराण अर्थ उच्चरें ।
वन्दे देव भयो आल्हाद, आये तहाँ राय प्रहलाद ।।

अंजनी-वाग्दान

(६७)

राय महेन्द्र अंक भरि लयो, भेंटत युगल बहुत सुख भयो ।
सबै कुशल की बूझी सार, कुशल सबै परजा व्यौहार ।।

(६८)

अति आनन्द दुहू मन भयो, ताको वरन जाई न कह्यो ।
कनक-शिला सोहै सु-विशाल, बैठे तहाँ दोऊ भू-पाल ।।

(९९)

घड़ी एक जब अवसर भयो, राय महेन्द्र बूझ तब लयो ।
सुनो बात प्रहलाद नरेश, व्यापै चिन्ता बहुत कलेश ।।

(१००)

मो पुत्री अंजनि सुन्दरी, रूप-विवेक कला-चातुरी ।
वरण जोग जब कन्या भई, निशि वासर मो निद्रा गई ।।

(१०१)

चिन्ता व्यापी अधिक शरीर, भावे नहीं अन्न अरु नीर ।
राज कुँवर देखे सब टोह, कोई मनहि न आयो मोह ।।

(१०२)

रावण को जो दीजे धिया, सहस अठारह उसके तिया ।
गत यौवन सब कोऊ भनै, तातें सुन्दरि देत न बनै ।।

(१०३)

इन्द्रजीत दीजे सुन्दरी, मेघनाद चित मानै बुरी ।
होय विरुद्ध दोई वर जुरे, तातें बात विचार न परे ।।

(१०४)

कनक नगर राजा हिरनाभ, सोलह कला चन्द्र जिमि आभ ।
ताको पुत्र बड़ो सुकुमार, रूप-कला, रु काम-अवतार ।।

(१०५)

बरस अठारह को जब होय, ले तप संयम धारे सोय ।
अवधि ज्ञान भासियो मुनी, ताको क्यों दीजे अंजनी ? ।।

(१०६)

पुटभेदन राजा प्रहलाद, केतुमती त्रिय के प्रासाद ।
एक पुत्र है पवन कुमार, रूपवंत गुणवंत अपार ॥

(१०७)

मंत्री लोग कहें सब कोय, पवन जोग यह पुत्री होय ।
मन वाँछित हम पूरो काज, दर्शन भये आपके आज ॥

(१०८)

हम ऊपर तुम होऊ कृपाल, हमरो बोल रखो भूपाल ।
बात तुम्हारे यदि मन भाय, तो पवनञ्जय दीजे व्याह ॥

(१०९)

सुनी बात बोले प्रहलाद, मन में मानौ अति आल्हाद ।
राय महिन्द्र वचन तुम कहे, सुनी बात हम अति सुख लहे ॥

(११०)

बहुलक वर हम देखे टोहि, पवन जोग कन्या नहिं होहि ।
अब हम ऊपर कीजे दया, करो विवाह पवन तुम धिया ॥

(१११)

कनक-मुद्रिका हीरा जरी, सोहै अतिशय आभा भरी
दाख बेल अरु आमें चढ़ी, प्रातिहार्य कर सुवरण छड़ी ॥

(११२)

राजा दोय महेन्द्र समान, दल-बल समधी दुहूँ समान ।
दोय बराबर कुल-आचार, धर्मवंत दोई गुण सार ॥

(११३)

दोई राय सुजान विवेक, जानें ज्योतिष अर्थ अनेक ।
दोई नृप को निर्मल हियो, राजा दुहूँ विनय अति कियो ॥

(११४)

देखी लगुन पवन-अंजनी, दोइ विवाह प्रीति अति घनी ।
डारे सबै अशुभ संजोग, पीड़ा दुःख न व्यापै रोग ॥

(११५)

बोले विप्र सुनो हे शाह ! दिन तीजे यहु कीजे व्याह ।
होय सिद्धि वर-कन्या सही, आगे बरस एक दिन नहीं ॥

(११६)

विप्र बचन कीने परमान, मन वाँछित तिन दीनें दान ।
पुंगीफल तें कर सत्कार, सुन्दरि कों परणाई कुमार ॥

प्रच्छन्न–दर्शी

(११७)

बाजे नाद निशानें घाय, भयो हर्ष पहुँचे घर राय ।
व्याह समय है मंगल चार, सज्जन मित्र मिले परिवार ॥

(११८)

पवनकुमार सुनि सुन्दरि रूप, सुर-कन्या तें अधिक अनूप ।
काम-बाण बेध्यो सु-शरीर, तब ही तज्यो अन्न अरु नीर ॥

(११९)

जब कामी को व्यापै काम, युक्तायुक्त न सूझै काम ।
चिन्ता उपजी बहुत शरीर, कायर होय सुभट वरवीर ॥

(१२०)

स्त्री रूप सुनौ जब नाम, कामातुर नहिं क्षण विश्राम ।
काम-वाण बेध्यो जिस काल, लेबे श्वासोच्छास त्रिकाल ॥

(१२१)

काम ज्वर व्यापै तसु देह, वैश्वानर ज्यों दाहे गेह ।
घड़ी एक नहिं थिरता लेय, मेटे धरम पाप-फल सेय ॥

(१२२)

जबै काम की होय अवाज, तब विष सम लागै जल नाज ।
जे नर होंय काम के वास, नारी कथा सुहावै तास ॥

(१२३)

मदन कुचेष्टा जाके अंग, गीत नृत्य भावै नव रंग ।
काम-वाण तसु हनै शरीर, मूर्च्छा गति पावै तसु बीर ॥

(१२४)

व्यापै काम भरै नर पाप, उपजै देह शोक संताप ।
दुख भुंजै नर आठों याम, जब ही आय उदीपै काम ॥

(१२५)

सुनकर अंजति रूप प्रशस्त, लियो बुलाय सुमित्र प्रहस्त ।
बोले पवन सुनो हे मित्त, बात हमारी देकर चित्त ॥

(१२६)

राय महेन्द्र अंजनी धिया, सुनो रूप चिन्तातुर हिया ।
सुन्दरि वेग दिखावहु मोय, मित्र ! काम यह तुम तें होय ।।

(१२७)

काम-अगनि तन कीनो क्षार, करहु कछू शीतल उपचार ।
जब ये प्राण निकरिहैं मोय, अति दुख तब ही सालहि तोय ।।

(१२८)

जबै अनिष्ट मित्र को होय, करै सहाय सु-मित्र जु होय ।
मन की बात कही मैं मूढ़, राखो मन में अपने गूढ़ ।।

(१२९)

पवनञ्जय की वार्ता सुनी, बोलो मित्र बुद्धि को धनी ।
छोड़ो पवन चिन्ता अनमनी, तुम्हें दिखाऊँ वेगि अंजनी ।।

(१३०)

जानो पवन मित्र को बोल, भयो सुखी मन कियो अडोल ।।
कहै वचन बैठ इक थान, दिन बीत्यो अस्तंगत भान ।।

(१३१)

दशौं दिशा कृष्ण-मुख किया, जैसे दीप्ति बिना है दिया ।
कामी जन सेवैं नित काम, धर्मवंत लें जिन को नाम ।।

(१३२)

भयो प्रभात रैन सब गई, पूरब दिशि सब पीली भई ।
तेजवंत रवि ऊँगो जबै, पंथी पंथ चले सब तबै ।।

(१३३)

बोल्यो मित्र प्रहस्त उदार, चलो मित्र सुन्दरि के द्वार ।
सुने वचन पवनञ्जय तनौं, रच्यो विमान मनोहर बनौं ।।

(१३४)

दोई गगन पंथ चढ़ि गये, सुन्दरि मन्दिर ठाड़े भये ।
देख गवाक्ष भलो तहँ थान, उतरे दोऊ मोड़ विमान ।।

(१३५)

प्रत्यक्षम् देखो तसु रूप, सुर कन्या तें अधिक अनूप ।
मन में भयो बहुत संतोष, मुक्ति लहैं ज्यों मुनि निर्दोष ।।

पवन-भर्त्सना

(१३६)

सुन्दरि रूप रह्यो मन भाय, तिहिं अवसर आई तसु धाय ।
अंजनि सुनो बात इक भली, पवन कुँवर तुम जोड़ी मिली ।।

(१३७)

पुत्री पुण्य उदय ह्वै आय, पायो कंत मनोहर राय ।
रूपकला गुन-धन सम्पन्न, कंत तुम्हारो मति व्युत्पन्न ।।

(१३८)

पूर्व जन्म सुकृत संग्रह्यो, कै तुम दान सुपात्रहिं दयो ।
पूजे देव बहुत मन लाय, तासु पुण्य वर ऐसो पाय ।।

(१३९)

दूजी सखी सुकेशी नाम, गलबहियाँ दे बोली ताम ।
मधुमाला तब बोली रूढ़, पापी 'पवन' निपट मति मूढ़ ॥

(१४०)

राय महिन्द्र तनी मति चली, बात विचारि न कीन्ही भली ।
पवनञ्जय मन चपल शरीर, अविवेकी गुणहीन अधीर ॥

(१४१)

सुन्दरि योग्य नहीं व्यवहार, काक-कण्ठ किमि शोभै हार ? ।
रूप नरेश कला नव धरे, वायु बगूलो घर घर फिरै ॥

(१४२)

राय महिन्द्र दोष पुनि नहीं, लिखो ललाट होय ही सही ।
अधिक चतुर नर होय सुजान, कर्मोदय से होय अजान ॥

(१४३)

सुनी पवन तब केशी बात, कोप्यो पवन पसीज्यो गात ।
अधिक रोष काया प्रज्ज्वली, मानो घृत वैश्वानर मिली ॥

(१४४)

कहे पवन केशी को हनो, मुझ अयुक्त यह बोली बनो ।
निरपराध निंदै जो कोय, ताको मारत पाप न होय ॥

(१४५)

बैठी पास सुनै सुन्दरी, कहलवाय मम निन्दा खरी ।
धिक् अंजनि धिक् केशी दासि, दोउ दुष्टनी करौं विनाशि ॥

(१४६)

धनुष-बाण कर लियौ उठाय, खेंच्यो अधिक कान लौं लाय ।
देख्यो मित्र गह्यो तसु हाथ, है अयुक्त यह कारज नाथ ! ॥

(१४७)

बोलो मित्र सुनौ सुकुमार, मारै त्रिया होय कुल क्षार ।
बढ़ै कलंक अकीरति होय, तातैं त्रिया न मारै कोय ॥

(१४८)

यह अपराध अंजनी नाँहि, अपयश यहै सुकेशी आहि ।
वही बड़ो जु क्षमा को गहै, नीच जाति के अवगुन सहै ॥

(१४९)

सुख को पर घर गये कुमार, तातैं फिर दुख भयो अपार ।
उपजै पाप दुःख अति होय, तातैं पर घर जाय न कोय ॥

(१५०)

बैठे दोऊ मित्र विमान, गये नगर पुटभेदन थान ।
पवनकुमार क्रोध मन भयो, सैन्य सुसज्जित करतो भयो ॥

आक्रमण, परिणय और परित्याग

(१५१)

नगर महेन्द्र घेर्यो आय, विविध भाँति उत्पात मचाय ।
सिंहनाद कर ध्वजा घुमाय, भेरि नाद वादित्र बजाय ॥

(१५२)

पहिरें सुभट कवच संजोग, नगर गाँव के देखें लोग ।
उत्तरोत्तर करहिं विचार, आयो नगरी कौन जुझार ? ॥

(१५३)

एक कहै यहु लंका धनी, शहँशाह सो दीसै घनी ।
पवनञ्जय कहुँ सुन्दरि दई, सुनी बात याकों रिष भई ॥

(१५४)

एक कहै झूठौ आलाप, लंकाधीश न आवै आप ।
इन्द्रजीत तसु बड़ौ कुमार, बैठो आय नगर के द्वार ॥

(१५५)

एकै साँचो बोल्यो आय, यहु तो सुत प्रहलाद कहाय ।
झूठ बात मति मानो येह, मैं पहिचानो सुन्दर देह ॥

(१५६)

राय महिन्द्र सुनी यह बात, धूनियो शीस पसीज्यो गात ।
आयो पवनञ्जय इस घरी, क्या हमसे कछु गलती परी ॥

(१५७)

स्वजन सनेही संग महेन्द्र, गये जहाँ प्रहलाद नरेन्द्र ।
दोऊ समधी भेंटे राय, बैठे सिंहासन इक ठाँय ॥

(१५८)

अवसर पाय कहै प्रहलाद, हससे कहा भयो उन्माद ।
शंका उपजी मन में आन, अगम बात कहिये श्रीमान् ॥

(१५९)

कहैं महेन्द्र सुनो भू-पती, सावधान एकाग्र हि चिती ।
पुत्र आप को पवनकुमार, बैठो जाय नगर के द्वार ॥

(१६०)

साहन-बाहन बहु विस्तार, मार्यो गाँव कर्यो गढ़ क्षार ।
कहो राय हमरो क्या दोष, पवनकुमार कियो अति रोष ॥

(१६१)

सुनी बात पुटभेदन राय, मन में अति लज्जा उपजाय ।
पहुँचो कुँवर तुम्हारे थान, भेद न जानो तुम्हरी आन ॥

(१६२)

दोई राय भये असवार, गये जहाँ हैं वायुकुमार ।
राय महेन्द्र जोड़ कर हाथ, पवनञ्जय को नमियो माथ ॥

(१६३)

छांड्यो रोष पवन तिहिं थान, राखी बहुत श्वसुर की आन ।
उपवन उत्तम नगर सुपास, दियो राय प्रहलाद निवास ॥

(१६४)

लग्न-दिवस को आयो काल, तोरण-मंडप रचे विशाल ॥
चित्रित पंच वर्ण के रंग, सोहैं ध्वजा बहुत उत्तुंग ॥

(१६५)

छियानव अंगुल वेदी रची, पंच वर्ण रतननि कर खची ।
मंगल-कलश धरे चहुँ पास, हरित वर्ण के रोपे बाँस ॥

(१६६)

आम्र-पत्र की बाँधी माल, छाये उज्ज्वल वस्त्र विशाल ।
मण्डप मध्य सु-पंडित आय, मंत्रोच्चारण तहाँ कराय ॥

(१६७)

पाँव पखारन बैठे शाह, अग्नि साक्षि सों भयो विवाह ।
राय महिन्द्र उठे तिहिं बार, हाथ जोड़बे के आचार ॥

(१६८)

पवन हस्त पानी जब लियो, घोड़े हाथी कंचन दियो ।
हीरा-मोती दिये दहेज, रत्न जटित सुख शय्या सेज ॥

(१६९)

साजन दोउ मिले तिहिं थान, यथायोग्य तहँ दीनो दान ।
मास एक तहाँ रही बरात, दल समेत पहुँचे कुशलात ॥

(१७०)

पवनञ्जय मन भर्यो गुमान, दियो अंजनी निर्जन थान ।
बहुतक निंदा दासी करी, तातें पवन तजी सुंदरी ॥

(१७१)

साथ रहे मधुमाला सखी, सूनें मंदिर निवसै दुखी ।
भई अभागिनि करै विलाप, पूर्वोदय का आयो पाप ॥

(१७२)

मस्तक धुन-धुन लेहि उसांस, नयन झिरें ज्यों भादों मास ।
कंत वियोग बहुत दुखी भरी, इह विधि काल गमै सुंदरी ॥

रावण-वरुण संग्राम

(१७३)

इतनी कथा यहाँ ही रही, अब यह कथा लंक-गढ़ गई ।
लंका-गढ़ है बसत विशाल, करै राज दशमुख भू-पाल ।।

(१७४)

तीन खंड धरती समृद्ध, चौदह सहस सु-विद्या सिद्ध ।
(वि) भीषण कुंभकर्ण द्वय भ्रात, दुर्जन नृप को करें निपात ।।

(१७५)

वीर न कोई धीर जु धरें, भूचर खेचर सेवा करें ।
दलबल सैनिक अति अभिमान, राज करें धर्णेन्द्र समान ।।

(१७६)

नगरि एक अति सुन्दर बनी, राजा वरुण तासु को धनी ।
रावण की नहिं मानें आन, सेना अधिक धरे अभिमान ।।

(१७७)

तेज प्रतापवंत ज्यों सूर, दुर्जन राय करै चकचूर ।
बात विचार गर्व अति भनौं, सुभट न कोई ता सम गिनौं ।।

(१७८)

रावण मन में रच्यो उपाय, पठियो दूत वरुण प्रति जाय ।
कहियो सेवक बन के आव, नातरि देश छोड़ करि जाव ।।

(१७९)

नाम सुनत ही चाल्यो दूत, पहुँचो वरुण राय पै कूद ।
दशमुख सुन सन्देश नरेश, सेवा करहु भोग बहु देश ।।

(१८०)

रावण तीन खंड को धनो, अर्द्ध चक्र तसु संपति घनो ।
भूचर-खेचर मानै आन, स्वर्गलोक सम लंका थान ।।

(१८१)

सत्वर चलि रावण करि सेव, कै तुम देश छोड़ियो एव ।
यदि न पास चल सेवा करौ, तो तुम जम के मुख में परौ ।।

(१८२)

सुन वच दूत वरुण उफन्यो, मानो वैश्वानर घृत पर्यो ।
को रावण ? कहँ लंका ग्राम, ? अर्द्ध चक्र मैं सुन्यो न नाम ।।

(१८३)

चक्रवर्ति इत बसै कुम्हार, बर्तन बेचे बीच बजार ।
नगरि माँहि भील जे फिरें, दाने घूरे बीनत फिरें ।।

(१८४)

घर ही गर्व करै नर कोय, वह क्षत्रीधर कैसे होय ? ।
यदि रावण दल पौरुष धाम, आवहु वेग करें संग्राम ।।

(१८५)

मैं धरती-धन लालच हीन, अतः रहूँगा मैं स्वाधीन ।
करहु युद्ध चढ़ि क्षत्री रीति, भाव बिना क्यों होवै प्रीति ? ।।

(१८६)

सुन कर बात चल्यो द्रुत दूत, रावण ढिग हो क्रुद्ध प्रभूत ।
वरुण राय जो उत्तर दियो, सो सब दशमुख सों जा कह्यो ।।

(१८७)

फिरै छत्र अति महा अडोल, राखो नाहिं आपको बोल ।
गर्ववंत अति उत्तर भनै, तुम को तो वो तृण सम गिनै ।।

(१८८)

सुनी बात रावण कोपियो, मानो अगनि माँहि घृत दियो ।।
दलबल सारी सैन्य सजाय, वरुण नगर पै चढ्यो आय ।।

(१८९)

पायो भेद वरुण भूपती, शंका कछू न मानो रती ।।
सेवक छोटे बड़े बुलाय, दीनो मान-दान तब राय ।।

(१९०)

दलबल साहन सब ले चढ्यो, वेगि जाय दशमुख सों भिड्यो ।
ले ताम्बूल मन हि किलकंत, जैसो मदमातो गजदंत ।।

(१९१)

दशमुख सेना देख अपार, किये उन्हों-पै तीव्र-प्रहार ।
जाने युद्ध-कला सब मित्र, मिलकर घाव करें सौ पुत्र ।।

(१९२)

रावण की बहु सेना हनी, कायर सुभट न कोई गुनी ।
बाँधि लयो खरदूषण राय, पहुँचे सुभट वरुण प्रति आय ।।

(१६३)

दशमुख को तब कांप्यो वक्ष, मनहुँ अगनि में झोंको वृक्ष ।
तज्यो तंबोल अन्न अरु नीर, चिन्ता व्यापी अधिक शरीर ॥

(१६४)

मंत्री बोले दशमुख सुनो, जिससे काम बने आपनो ।
लंका जाय सैन्य सब लौट, आय करो पुन युद्ध बहोट ॥

(१६५)

सुनी सीख जब मंत्री तनी, बहुरि गयो लंक को धनी ।
जितने थे सेवक आधीन, उन सबको पत्री लिख दीन ॥

पवन-प्रस्थान

(१६६)

दूत एक पुटभेदन गयो, लिखित पत्र प्रह्लादहिं दियो ।
बांचो लिखो भयो आल्हाद, सम्प्रति गमन करे प्रह्लाद ॥

(१६७)

बजी भेरि अरु नाद-निशान, हाथी घोड़े धरे पलान ।
पवनञ्जय जब सुनियो हाल, जनक समीप गयो तत्काल ॥

(१६८)

हाथ जोड़ यह कीनी बात, विनती सुनहु हमारे तात ।
स्वामी हमको आज्ञा देहु, जाकर करहुँ दशानन सेहु ॥

(१९९)

देखो लंका सम गढ़ थान, तापर वरुण करै अभिमान ।
नृप ने सुने पुत्र के बैन, मन में पायो अति सुख चैन ॥

(२००)

सुनो कुमार हमारी बात, तुम संग्राम न जानो घात ।
बाजे भेरी नाद-निशान, सुनत कान तुम तज हो प्रान ॥

(२०१)

नींद-भूख तो जाय न सही, बाल योग्य यह कारज नहीं ।
वचन पिता के मन में धार, बोल्यो तब यों पवनकुमार ॥

(२०२)

बाल-सर्प जो डसै तुरन्त, तापै चलै न तंत्र न मंत्र ।
बालक सिंह होय अति शूर, गज समुदाय करै चकचूर ॥

(२०३)

अष्टापद को होय जु बाल, हस्ती सहित सिंह को काल ।
जो बालक चिन्तातुर होय, हारे युद्ध न जीते कोय ॥

(२०४)

क्षत्री पुत्र न बालक होय, अतः तात दो आशिष मोय ।
राजा सुनत अधिक सुख भयो, पुत्र हाथ ले बीड़ा दयो ॥

(२०५)

पुत्र जनक बच करि परमान, चलो सैन्य ले लंका थान ।
पिता अमोल पाय उपदेश, चलियो दलबल सुभट अशेष ॥

(२०६)

करि स्नान पूजे जिनदेव, नमस्कार करि गुरु की सेव ।
बाल-वृद्ध मिल सब परिवार, एक साथ कीनो आहार ॥

(२०७)

ले ताम्बूल वस्त्र आभर्न, शस्त्र सुसज्जित नाना वर्न ।
भेंटि कुटुम्ब सबै परिवार, चाल्यो लंका पवन कुमार ॥

(२०८)

निकसि पौर पहुँचो जब द्वार, देखी खड़ी तहाँ निज नार ।
बिन आभरण कुचैले-चीर, झिरैं नैन ज्यों भादों नीर ॥

(२०९)

पौर दिवाल खड़ी सुन्दरी, मानो चित्र चतेरे करी ।
भयो कुपित अति पवनकुमार, देख्यो ढीठ पनो व्यवहार ॥

(२१०)

मन मर्याद नहीं मुझ तनी, लाज बेचि खाई पापिनी ।
गमन-काल ठाडी हो रही, मुख देखन के योग्यहि नहीं ॥

(२११)

हिये कुटिल अति रोवे खरी, इस पापिनि पै मैं दिठि परी ।
सुन्दरि सुनी कत को बात, हरषी चित्त हुलासी गात ॥

(२१२)

हाथ जोड़ सन्मुख विहसंत, वेग गमन करि आवहु कंत ।
सुनी बात चल दियो कुमार, अति शुभ शकुन भये तिहिं बार ॥

(२१३)

नारि गावतीं मिलीं अनेक, दही दूब धरि थाली नेक ।
बायें सिंह दहाड़े घनो, पावे सुख पति लंका तनो ॥

(२१४)

बायें देवी करहिं पुकार, आवै कुशल मिलै परिवार ।
देखि शकुन शुभ पुण्य-प्रभाव, दो योजन पर कियो पड़ाव ॥

(२१५)

निर्मल नीर गहिर गंभीर, तम्बू तने सरोवर-तीर ।
दिन गत भयो अस्तगत भान, पंक्षी शब्द करें असमान ॥

अन्तर्द्वन्द

(२१६)

मित्र सहित पवनञ्जय राय, मंदिर ऊपर बैठे जाय ।
देखे पंक्षी सरवर तीर, करें शब्द अति गहन गंभीर ॥

(२१७)

दसों दिशा मुख कालो भयो, चकवी-चकवा अंतर भयो ।
पिय वियोग चकवी दुख करे, ऊँची उठ भू पै गिर परे ॥

(२१८)

क्षण इक उठै क्षणिक विललाह, क्षण-क्षण पंख पसारे आह ।
देखि पवन चकवी व्यवहार, कहो, मित्र यह कौन विचार ? ॥

(२१६)

धीर न धरै पुकारै घनी, कहो बात तुम चकवी तनी ।
कहे मित्र पवनञ्जय सुनो, कंत वियोग करे दुख घनो ॥

(२२०)

दिवस मिलन का है संयोग, रात होत इन परै वियोग ।
पवनञ्जय सुनि इनकी बात, काम-बाण तसु बेध्यो गात ॥

(२२१)

चिन्ता उपजी बहुत शरीर, रहे न चित्त एक क्षण धीर ।
पवनञ्जय बोलो तत्काल, सुनो मित्र ! मम वचन रसाल ॥

(२२२)

चकवी एकहि रात वियोग, करै विलाप अधिक दुख सोग ।
कहो, अंजनी किम जी-बीस, छोड़े भये बरस बाईस ॥

(२२३)

अति अपराध भयो है मोय, हम समान नहिं मूरख कोय ।
मैं पापी मति ठानी बुरी, निर अपराध तजी सुन्दरी ॥

(२२४)

बिन विचार जे कारज करै, ताको काम न एकहु सरै ।
तजी त्रिया मेरी मति गई, बुद्धि सबै हर लीनी दई ॥

(२२५)

ताको भयो बड़ो बड़ो संदेह, अगनि काष्ठ सम दाहै देह ।
मित्त काम यहु तुम तें होय, सुन्दरि वेग मिलावहु मोय ॥

(२२६)

मित्र मित्र को करै विश्वास, मित्र बिना नहिं पूरै आस ।
बहुत आपदा आवै जबै, मित्र परीक्षा पावै तबै ॥

(२२७)

काया दुखी करै जब कोय, तबै मित्र तें रक्षा होय ।
सुख दुख में जो आवै काम, साँचो मित्र ताहि को नाम ॥

(२२८)

मैं तुम आगे छोड़ी लाज, अंजनि वेग मिलावहु आज ।
जे हैं प्राण निकसि हम तनैं, तब तुम को दुख साले घनैं ॥

(२२९)

रावण-वरुण दोऊ दल जुरे, कहा विचार दई घर परे ।
क्षत्री जुरिहैं दोनों ओर, ऊँट बैठिहै फिर किस ओर ॥

(२३०)

सुनी बात हँसि बोले मित्त, राखो पवन धीर धरि चित्त ।
धीर न धरै अधिक अकुलाय, ताको कारज एक न थाय ॥

(२३१)

धीरे क्षत्री पावें राज, धीरे खेती निपजे नाज ।
लगा वृक्ष धीरे फल खाय, धीरे मुनिवर मुक्तहिं जाय ॥

(२३२)

धीरे मन में उपजे बुद्धि, धीरे होय कार्य की सिद्धि ।
धीरे वस्तु मिले सब सार, धीर चित्त धरि रहो कुमार ॥

(२३३)

पहिलो पहर निशा जब गई, निद्रा वश सब सेना भई ।
जो सेवक था अति विश्वस्त, ताहि बुलायो पवन-प्रहस्त ।।

(२३४)

कहे पवन सेवक सुन बात, यात्रा हेतु युगल हम जात ।
नीके सेना रखियो रात, वंदि देव आऊँ परभात ।।

(२३५)

सेवक कहे सुनो हे राय, वचन लियो सिर माथ चढ़ाय ।
जब लों तुम करि आवहुँ जात, तब तक दल राखहुँ कुशलात ।।

पिया-मिलन

(२३६)

दोऊ बैठि उड़ चले विमान, तत्क्षण गये अंजनी थान ।
उतर यान द्वारे रख दियो, तब सुन्दरि को चमक्यो हियो ।।

(२३७)

इतनी रात आयो इहि ठाम, कौन पुरुष कहि अपनो नाम ।
पूर्वहि अशुभ करम की मार, कौन आपदा आई अपार ।।

(२३८)

थर थर थर थर कप्यो शरीर, सुन्दरि चित्त धरै नहिं धीर ।
उठि देखो मधुमाला तबै, कौन पुरुष आयो इत अबै ।।

(२३९)

ठाड़ो बाहर बोलो मित्त, ना करि स्वामिनि शंका चित्त ।
अशुभ कर्म अब हुये विनाश, कंत अंजनी आये पास ॥

(२४०)

शंका भई सुन्दरी वक्ष, सपनो है अथवा प्रत्यक्ष ।
जहाँ प्रिया को शयनागार, तहँ जा पहुँचे पवनकुमार ॥

(२४१)

देख कुँवर चिन्ता सब गई, छोड्यो आसन ठाड़ी भई ।
कर गहि लिया पवन निःशंक, बैठे दम्पति इक पर्यंक ॥

(२४२)

बोले पवन सुन्दरी सुनो, हम अपराध भयो है घनो ।
मैं पापी निर्दय मतिहीन, बिन अपराध तुम्हें दुख दीन ॥

(२४३)

शीलवंत कुलवन्ती नार, तुम सी त्रिया नहीं संसार ।
हम से चूक बड़ी है बनी, क्षमा करो हमको अंजनी ॥

(२४४)

स्वामी के सुन सुखप्रद बैन, हाथ जोड़ बोली भरि नैन ।
तुम कछु दोष नहीं हे देव ! पूर्व कर्म भुगतें नर-देव ॥

(२४५)

दोष न कोऊ काहू देय, जस बोबे तसहू फल लेय ।
जब लगि अशुभ करम था कोय, तब लगि दुःख दिखायो मोय ॥

(२४६)

अब तुम घर आये हो नाथ ! मुझ सुहागिनी करो सनाथ ।
अब लों हती अंजनी सही, अब तुम दरश निरंजनि भई ।।

(२४७)

हाव-भाव अति कीनो सती, कीनो भोग तहाँ दम्पती ।
जैसो पुरुष लिया व्यवहार, तैसो भयो सबै आचार ।।

(२४८)

पिछलो पहर जब निशि को भयो, तबै गमन पवनञ्जय कर्‌यो ।
मित्र प्रहस्त को लियो बुलाय, बैठि विमान चल्यो दल ठाँय ।।

(२४९)

सुन्दरि कहै कंत सुन एव, तुम तो चले लंकपति सेव ।
आये गुप्त कियो संभोग, हम को है ऋतुवेला जोग ।।

(२५०)

क्वचित् कदाचित् गर्भ जु रहा ? तो आगे मैं करहूँ कहा ?
दुर्जन नर नहिं जाने भेद, अपयश करि ढूंढ़ें बहु छेद ।।

(२५१)

सासु श्वसुर सब ही परिवार, हम शिर मढ़ें कलंक कुमार ।
निन्दा करिहैं सब मिलि कोई, कहा सीख पिय हमको होई ।।

(२५२)

सुने वचन सुन्दरि के जबै, दियो पवन ने उत्तर तबै ।
अंजनि वचन तुम्हारे सही, बात कहन के योग्यहि नहीं ।।

(२५३)

जाने लोग पिता अरु माय, हाँसी होय लंकपति जाय ।
जग में अपयश मेरो होय, जातें प्रकट न करियो मोय ।।

(२५४)

स्वर्ण मुद्रिका शुभ मणि मयी, पवन उतार हस्त की दयी ।
सासु श्वसुर करिहैं जब रार, तबहिं मुद्रिका दियो निकार ।।

निष्कासिता

(२५५)

पवनञ्जय लंका प्रति गयो, गर्भाधान अंजनी भयो ।
बढ़्यो गरभ मास दो चार, भई प्रफुल्लित अंजनि नार ।।

(२५६)

हाथ-पाँव-मुख चले पसेव, काया पीत बरन स्वयमेव ।
मास गर्भ जब भयो व्यतीत, केतुमती तब हुई विपरीत ।।

(२५७)

धुन्यो माथ मीचे दोउ नैन, अंजनि सन्मुख भाखे बैन ।
कहा पापिनी कियो उपाय, राख्यो गर्भ कौन कह ठाँव ।।

(२५८)

सह कुटुम्ब बोलो तत्काल, कुल कलंकिनी चली कुचाल ।
कियो कुकर्म गर्भ व्यवहार, जान्यो नहीं कियो को धार ?

(२५६)

मेरो कुल उज्ज्वल उत्तुंग, लगा कालिमा कियो कुरंग ।
कीरति अधिक कंत मुझ तनी, ताकी हान करी पापिनी ।।

(२६०)

अश्रु पूर्ण कर दोऊ नैन, सविनय बोली सुन्दरि बैन ।
गुप्त रूप आये भरतार, तिन संग भोगे भोग अपार ।।

(२६१)

ताहि समय मैं ऋतुमति ठई, यातैं गर्भ धारती भई ।
पश्चिम में सूर्योदय होय, पर मो वचन न मिथ्या होय ।।

(२६२)

वचन हमारे नहिं विश्वास, तो मधुमाला पूंछो सास ।
मो प्रियतम की पन्ना जरी, देख निशानी यहु मुद्दंरी ।।

(२६३)

बोली सास अरी अंजनी, दीखत है तू अति प्रपंचिनी ।
मायामयी मुद्रिका लाय, मोकों मूरख रही बनाय ।।

(२६४)

पुरुष पराई सेवन हार, करै कुतर्कं कुलटा-नार ।
पातिव्रत्य भूल कर यहाँ, यह कुटिलाई सीखी कहाँ ? ।।

(२६५)

घर से निकल वेग तू जाय, मत बन इस कुल को दुखदाय ।
नगर लोग जो जानै भेद, बढ़िहै अपयश निंदा खेद ।।

(२६६)

दासी एक दई तिहिं साथ, काढ़ी अंजनि पकरहिं हाथ ।
ढील न करो वेग ले जाहु, नगर महिन्द्र दिखावहु याहु ॥

—दोहा—

(२६७)

लिखे विधाता लेखना, कोऊ न मेटन हार ।
बांधे पूरव कर्म जो, फल भुगते संसार ॥

(२६८)

दुख-सुख अरु जामन मरण, जिहिं वेरां जिहिं होय ।
घड़ी मुहूरत एक क्षण, राखि सकै नहिं कोय ॥

अंतर्दाह

(२६६)

निकसि अंजनी करै विलाप, उदय भयो को बांधो पाप ।
कै मैं दियो कु-पात्रहिं दान, कै मुनिजन कीनो अपमान ॥

(२७०)

कै जिनवर को धर्म न कियो, कै पूरव मिथ्या मत सेइयो ।
कै कु-दान दीनेहु मैं दात, कै मैं भोजन कीनो रात ॥

(२७१)

कै मैं जीव हने बहु भीर, कै अनछान्यो लीन्यो नीर ।
कै अखाद्य वस्तु आचरी, कै मैं पर की निंदा करी ॥

(२७२)

कै पर-पुरुष करी मैं सेव, कंदमूल फल भखियो एव ।
कै मैं नगर वारियो दाह, पूरव-पाप भये अब आह !

(२७३)

विधि को कैसो विकट विधान, कियो वियोगिनि गर्भाधान ।
करते समय नाथ सहवास, क्यों न भये मम प्राण विनाश ।।

(२७४)

हे मधुमाला ! करहु उपाय, मैं पुत्री तुम मेरी माय ।
पूरो गर्भ भयो व्यवहार, जीवें कहाँ कौन आधार ? ।।

(२७५)

सुन सु-वचन बोली मधुमाल, मन तें दुख को देहु निकाल ।
श्वसुर सासु पिय दुख दे घनो, शरणाई घर माता तनो ।।

(२७६)

कष्ट झेलती पहुँची तहाँ, राय महिन्द्र थान है जहाँ ।
विलखत वदन सुंदरी गई, सिंह द्वार ठाड़ी तब भई ।।

पददलिता

(२७७)

द्वारपाल दई सुवरण-साट, नाम तासु को शिला कपाट ।
जहाँ पिता-माता को थान, सुन्दरि को नहिं दे तहँ जान ।।

(२७८)

मधुमाला बोली सुन तात ! तो सों कहौं पाछिली बात ।
पवनञ्जय लंका कों गयो, गुप्त पने मन्दिर आ गयो ।।

(२७९)

योग्य समय दीनो रति-दान, उपज्यो तहाँ गरभ-आधान ।
जानो हाल श्वसुर अरु सास, तब अंजनि को दियो निकास ।।

(२८०)

तदनन्तर जो जो दुख सहे, ते सब द्वारपाल सों कहे ।
सुनकर व्यथित सुन्दरी हाल, शिला कपाट भयो बेहाल ।।

(२८१)

मधुबाला से सब सुन हाल, शिला कपाट गयो तत्काल ।
करि जुहारु राजा सों कह्यो, अंजनि गमन पिता गृह भयो ।।

(२८२)

कीनी हमने आड़ी छड़ी, सिंह द्वार राखी कर खड़ी ।
जैसी आज्ञा प्रभु की होय, तैसो उत्तर दीजो मोय ।।

(२८३)

सुनी बात राजहिं सुख भयो, मन में अति आनन्दित ठयो ।
नगर उछाह करो सु विशाल, बाँधो तोरण बंधन माल ।।

(२८४)

द्वारपाल बोलो सुन राय, काहे नगरी रहे सजाय ?
जैसी जुगति गर्भ थिति रही, तैसी विधि राजा सों कही ।।

—दोहा—

(२९२)

जा दिन आव आपदा, ता दिन मित्र न कोय।
मात-पिता परिवार सब, ते पुनि बैरी होय॥

(२९३)

कंत सासु सुसुरो पिता, रथ दल अधिक अनूप।
सो सुन्दरि निष्कासियो, यों संसार स्वरूप॥

वीहड वन में मुनि दर्शन

(२९४)

निकसि सुन्दरी यों विलखात, युक्त नहीं तुम को यह तात।
आयो शरण न काढ़े कोय, यह तो क्षत्री धरम न होय॥

(२९५)

मुझ पर कियो नहीं विश्वास, निर्दय केतुमति भई सास।
मैं अपराध कियो नहिं कोय, नाहक ही दुख दीनो मोय॥

(२९६)

अहो श्वसुर राजा प्रह्लाद, काहे मोपर कियो विषाद।
झूठ-सांच को न्याय न कियो, बिन अपराध निकारो दियो॥

(२९७)

अहो कंत ! तुम्हरी मति चली, एकई बात न कर गये भली।
मात-पिता को भेद न दियो, आये गुप्त मोय दुख दियो॥

(२९८)

रुदन करै झूरै सुन्दरी, पंथ एक डग जाय न धरी।
गरभ भार अति पीड़ा भई, युगपद घुमैं अधिक दुख लई ॥

(२९९)

छिन इक चलै छिनक भू परै, करै विलाप बहुत दुख भरै।
अधिक आपदा उपजी ताम, पग-पग बैठ लेहि विश्राम ॥

(३००)

मधुमाला आलम्बन देय, कर गहि काँधे हाथ सु देय।
एक पंथ अरु दूजे दुःख, क्षण भर सुन्दरि लहै न सुःख ॥

(३०१)

देखै कुंवरि आपदा थान, दिन सब गयो अस्तगत भान।
अन्धकार वश अति दुख लह्यो, पीड़ा पर की देखि न सह्यो ॥

(३०२)

दसों दिशा काली अति भई, नयन पंथ दीखत कछु नहीं।
एक एक डग दूभर भई, वृक्ष तलें ठहरन को गई ॥

(३०३)

मधुमाला तरु देख अशोग, तोड़े पत्र बिछावन जोग।
झाड़ी भूमि बिछाये पान, कियो कुँवरि को सुथरो थान ॥

(३०४)

सुन्दरि शोक तज्यों तिहि बार, जपियो मंत्र सिद्ध नवकार।
मन में राखि जिनेश्वर नाम, पौंडी कुँवरि लियो विश्राम ॥

(३०५)

ऊगो भानु निशा अब गई, पूरव दिशा जु पियरी भई ।
दिनकर तेज जाय नहिं सह्यो, अंधकार को प्रलय भयो ॥

(३०६)

उठ करि कीनो जय जयकार, महामंत्र जपियो नवकार ।
कर गहि लियो सखी मधुमाल, वन में चली अंजनी बाल ॥

(३०७)

वन अति विषम महा भयभीत, नाहर सिंह बसें विपरीत ।
चीता शूकर रीछ सियार, ता वन पहुँची जनि अंजनि नार ॥

(३०८)

चलत पंथ वन आधे गई, नग्न दिगम्बर देखत भई ।
मन में पायो बहुत हुलास, वेग गई मुनिवर के पास ॥

(३०९)

देखे मुनिवर अति गंभीर, महा अडोल मेरु सम धीर ।
फटिक शिला बैठे मुनिराय, दिये ध्यान चेतन चित लाय ॥

(३१०)

मस्तक जोर दियो दोऊ हाथ, भाव सहित वंदे मुनि नाथ ।
जोग जुगति जब पूरी भई, मुनिवर धर्म वृद्धि तसु दई ॥

(३११)

समाधान बूझे बहुवार, जैसो श्रावक यति व्यवहार ।
अंजनि भई खुशी भरपूर, मेघ देख ज्यों नचे मयूर ॥

(३१२)

शीस भूमि धर जोड़े हाथ, दश विध धर्म कह्यो मुनिनाथ।
धर्म कह्यो निश्चय व्यवहार, सुन सुंदरि सुख लह्यौ अपार ।।

(३१३)

मुनिवर को कर अति सन्मान, पूजा करी सु-भाव प्रधान।
मधुमाला ने अवसर पाय, जोड़ हाथ बूझे मुनिराय ।।

(३१४)

अंजनि क्यों पायो अति त्रास, जब से भयो गर्भ अधिवास।
कै यहु पापी कै यहु मित्र, कै यहु पुन्नी कै यहु शत्रु ?

(३१५)

कौन जीव यह उपज्यो आय, जिहिं कारण यहु दु:ख उठाय।
किस कारण इह लग्यौ कलंक, सती अंजनी मुखी मयंक ।।

(३१६)

सुनें वचन मधुमाला तनों, मुनिवर नाथ भने तत्छिनों।
चित्त शुद्ध कर त्यागहु खेद, पुत्री सुनो गरभ को भेद ।।

गर्भ-रहस्य

(३१७)

जम्बूद्वीप प्रकट है लोक, भरत क्षेत्र तिसमें अवलोक।
मंदिरपुर अति उत्तम धाम, बसै वैश्य 'प्रियनन्दी' नाम ।।

(३१८)

प्रियपत्नी 'जाया' ने जयो, नाम 'दयन्त' तासु को धर्‌यो।
रूपकला गुण अधिक अपार, पायो पुण्य अधिक भंडार ॥

(३१९)

एक दिवस वन-क्रीड़ा गयो, चारण युगल देखतो भयो।
पहुंचो साधु समीप कुमार, वंदे मुनिवर जग—आधार ॥

(३२०)

सुन्यो धरम उपज्यो संतोष, श्रावक व्रत लीनें निर्दोष।
नमस्कार करि बारम्बार, थान आपने गयो कुमार ॥

(३२१)

नितप्रति देय सुपात्रहिं दान, जिनवर धर्म करे गुरु मान।
तजे प्राण कर आयू पूर्ण, स्वर्गों के सुख पाये पूर्ण ॥

(३२२)

देव आयु जब पूरी भई, नर—पर्याय श्रेष्ठ घर लई।
नगर मृगाङ्क तुङ्ग अभिराम, हरिश्चन्द्र राजा को नाम ॥

(३२३)

दान-पुण्य तिस कीनो घनो, शुद्ध चित्त राखे आपनो।
आयु-कर्म को आयो अंत, भयो स्वर्ग में देव महंत ॥

(३२४)

बहु सुख भोगे आयु प्रमाण, उपज्यो नगर 'अरुण' शुभ ठान।
नाम सुकंठ बसे भूपाल, गृहिणी 'कनकोदरी' विशाल ॥

(३२५)

सिंहवाहन तसु उपज्यो नंद, रूप-कला ज्यों पूरण चन्द ।
देव-शास्त्र गुरु सेवा करै, जैन धरम को निश्चय धरै ।।

(३२६)

एक दिवस सो वन में गयो, विमलनाथ जिन दर्शन भयो ।
दियो राज निज कुँवर बुलाय, दीक्षा लीनी मन-वच-काय ।।

(३२७)

मुनि व्रत धार शरीर विहाय, उपज्यो स्वर्ग सातवें जाय ।
भोग स्वर्ग के सुखद विलास, कियो अंजनी गर्भावास ।।

(३२८)

उत्तम जीव पुण्य की खान, पावै इसी देह निर्वान ।
गर्भ दोष कछु नहिं हे सुता, दोष न श्वसुर-सास अरु पिता ।।

(३२९)

पूर्व पाप जे संचित किये, तिनको भोगे पवन:-प्रिये ।
कहें जती मधुमाला सुनो, जैसो बोयो तैसो नुनो ।।

(३३०)

सुने वचन मुनि के चित लाय, भयो हर्ष नहिं अंग समाय ।
हाथ जोड़ मधुमाला कह्यो, विरह-कथा मुनि कहिये सही ।।

(३३१)

मुनिवर बोले सुनहु कुमारि, कहौं कथा सुन मन अब धारि ।
जिहिं कारण पापोदय भयो, सो सब सुनहु यथा विधि भयो ।।

विरह-रहस्य

(३३२)

पूरव जनम राज-गृह त्रिया, 'कनकोदरी' नाम तसु दिया।
ताकी सौत सु लक्ष्मी मती, जिनवर भक्ति करै नित प्रती ।।

(३३३)

भवन माँहि अति उच्च स्थान, जिनवर बिम्ब धरे तिहिं थान।
पूजा अष्ट प्रकारी करै, दान-पुण्य-संयम आचरै ।।

(३३४)

देखी प्रतिमा कनकोदरी, कियो कुकर्म ताहि प्रति हरी।
गहर बावड़ी पानी घनो, पटक्यो तहाँ बिम्ब जिन तनो ।।

(३३५)

आहारार्थ आर्यिका एक, निकसी रुकी लक्ष्मी देख।
बिम्ब वियोगिनी लक्ष्मीमती, करै पुकार शोक अति सती।

(३३६)

कहै आर्यिका मत करि खेद, प्रतिमा को मैं पायो भेद।
साँच वचन सब मेरे जान, तुझ को बिम्ब दिखाऊं आन ।।

(३३७)

"संयमश्री" अति आतुर भई, कनकोदरि के मंदिर गई।
रानी नमस्कार उठि कियो, उच्चासन बैठन को दियो ।।

(३३८)

कहे आर्यिका रानी सुनो, अशुभ बंध तुम कीनो घनो।
तीन लोक पूजें जिनराज, तिनको हरण उचित नहिं काज ।।

(३३९)

जब तीर्थङ्कर जनम सु होय, इन्द्र शची सुर नाचें सोय।
मेरु शिखर शोभित चिद्रूप, ते जिनवर क्यों डारे कूप ? ।।

(३४०)

रानी उत्तम कुल उत्पन्न, तू पटरानी सुख सम्पन्न।
ऐसो मन में धर्‌यो कुभाव, श्री जिन बिम्ब वेग ले आव ।।

(३४१)

दुष्ट भाव जिनवर पर रहै, नरक दु:ख सो निश्चय सहै।
पावे नहीं सौख्य सुखधाम, क्षण भर नहीं मिले विश्राम ।।

(३४२)

संयम श्री की सुन सच बात, कनकोदरि को कम्प्यो गात।
पहुँची वेग बावड़ी थान, लाई बिम्ब कियो बहुमान ।।

(३४३)

प्रमुदित मन जिन-पूजा करी, उत्तम क्षमा-भाव मन धरी।
छोड़े सारे मलिन विकार, शुद्ध भाव कीने निरधार ।।

(३४४)

संयम सहित बहुत दिन गये, आयु निषेक सु खिरते भये।
मरण काल लीनो संन्यास, उपजी जाय सुरग आवास ।।

(३४५)

उत्तम भई देव अंगना, मन वांछित सुख भोगे घना।
देवी आयु पूर्ण जब करी, राय महिन्द्र सुता अवतरी ॥

(३४६)

जिनवर बिम्ब घड़ी बाईस, जल समाधि गत कीनै ईश।
तातें तू उतने ही वर्ष, रही वियोगिनि पति अपकर्ष ॥

(३४७)

पूरव पाप किये अति बुरी, आयो पाप उदय सुंदरी।
ऐसो करम न कीजो कोय, बाढ़े पाप अधिक दुख होय ॥

(३४८)

जैन धरम की निंदा करै, सो भव-वन में भटकत फिरै।
अब पुत्री ! मन को तज शोग, शीघ्र होय स्वामी संयोग ॥

(३४९)

भुगतो पुत्र तनो सुख घनो, मिलिहै सकल कुटुम तुम तनो।
साधु वचन सुन पाई धीर, तृषा जाय ज्यों पीवत नीर ॥

(३५०)

शोक सबै छांडो तिहिं बार, अमृत मुनि वाणी निरधार।
नमस्कार करि आगे चली, गुफा एक तहँ देखी भली ॥

(३५१)

दीर्घ बहुत चौड़ाई घनी, सखी सहित ठहरी अंजनी।
विविध फूल-फल दासी लेय, भोजन योग्य कुँवरि को देय ॥

सिह-आक्रमण

(३५२)

धर्म-कथा को करै बखान, निवसै गुफा निरंजन थान।
ठहरत भये दिवस दो चार, आयो सिंह गुफा के द्वार॥

(३५३)

महा दुष्ट देख्यो विपरीत, शका चित्त भई भयभीत।
गुफा माँहि सुन्दरि ले दई, दासी उड़ी अकाशे गई॥

(३५४)

गगन-पंथ रोवे दुख भरी, हे विधि ऐसी काहे करी।
सुन्दरि लाड-प्यार करि बड़ी, दैव वशात् सिंह मुख पड़ी॥

(३५५)

अधिक विलाप करै अकुलाय, फिरे गगन में नहि ठहराय।
मणीचूल नामक वन देव, रत्नचूलिका पूछे भेव॥

(३५६)

हे स्वामिन् को रही पुकार, ताको मो सों कहो विचार।
मणीचूल पत्नी से कहे, महिला युगल गुफा में रहे॥

(३५७)

सुंदरि एक गुफा में धरी, दूजी गगन-पंथ संचरी।
रोक्यो सिंह गुफा को द्वार, ता कारण यह करै पुकार॥

(३५८)

गुफा माँहि याकी सखि रहै, तासु वियोग-अग्नि मैं दहै।
सुनी देव की देवी बात, करुणा पूर्ण भयो तसु गात ॥

(३५९)

स्वामि जाय सिंह वध करो, अवला द्वय का संकट हरो।
देवी के कर वचन प्रमान, मणीचूल पहुँचो तिंहि थान ॥

(३६०)

अष्टापद को रूप बनाय, चौपद सिंह को देय डराय।
जाय गुफा मुख ठाड़ो भयो, करि आडम्बर आगे गयो ॥

(३६१)

मार्‌यो सिंह उड़ाई क्षार, मुक्त भयो गह्वर को द्वार।
सिंह पछाड़ देव गृह गयो, मधुमाला मन हर्षित भयो ॥

(३६२)

उतरी गगन गुफा में गई, निज स्वामिनि को बाहुन लई।
दासी कहे अंजनी सुनो, पुण्य उदय आयो तुम तनो ॥

(३६३)

भक्षणार्थ आयो सिंह क्रूर, कियो देव नें सब भय दूर।
भली बात धर्मंहि ते होय, भूत-पिशाच न पीडै कोय ॥

(३६४)

धर्म एक जग में आधार, धर्मी जन पावैं शिव-द्वार।
धर्म सहाय सर्प हो हार, धर्म सहाय सिंह हो स्यार ॥

(३६५)

धर्म-कल्पतरु जो नर सेय, मन बाँछित फल तुरतहि लेय।
दुख न सहे धर्म की साख, पुत्री धर्म एक मन राख ।।

(३६६)

धर्म-कथा दोऊ मिल कहें, सुख सों गुफा निरंजन रहें।
मुनिवर के गुण-गायन करें, वचन सुने ते निश्चय धरें ।।

हनुमान-जन्म

(३६७)

अशुभ बीत शुभ आयो पर्व, सपत्नीक आयो गन्धर्व।
नृत्य-गान संगीत सुनाय, अंजनि मधु को मन बहलाय ।।

(३६८)

तन घुमाय ज्यों चक्र कुम्हार, नृत्य दिखाये विविध प्रकार।
यक्ष-यक्षिणी पूजा करी, अपनी राह चले तिस घरी ।।

(३६९)

सखी कहे जानों अंजनी, या विभूति सब पुण्यहि तनी।
आगें नाचे सुर-किन्नरी, नाचत गावत पांयन परी ।।

(३७०)

अंजनि मन में उपज्यो भाव, जिनवर बिम्ब रच्यो तिहिं ठाँव।
अष्ट द्रव्य ले पूजा करी, मन में अति प्रसन्नता भरी ।।

(३७१)

इह विधि अवधि धरम में गई, प्रसव-वेदना उठती भई।
शुभ दिन योग लगन नक्षत्र, कुँवरि गर्भ तें निकस्यो पुत्र ॥

(३७२)

गुफा माँहि अति भयो उजास, मानो रवि कीनो परकाश।
रूप-कला गुण लह्यो न पार, कामदेव सुन्दर अवतार ॥

(३७३)

दिनकर कोटि दिपै तसु देह, सोलह कला चन्द्र-मुख येह।
तेज पुंज दीसे वरवीर, महा वज्रमय चर्म-शरीर ॥

(३७४)

अंजनि देख बाल की देह, मन में भयो विषाद सनेह।
भवनोत्सव मैं करती घनें, दैव संयोग गुफा में जनें ॥

(३७५)

निर्जन वन में रहियो आन, आवत देख्यो एक विमान।
कै यह मित्र, शत्रु है कोय, दिव्य पुत्र किमि रक्षा होय ॥

(३७६)

घने कष्ट पूर्‌यो आधान, महा अरण्य जन्म को थान।
विधिना संकट पर्‌यो कुमार, किस विधि हो शिशु को उद्धार ॥

(३७७)

गगन माँहि उड़ रह्‌यो विमान, गुफा द्वार पै अटक्यो आन।
मन में चिंते खेचर ताम, कौन यती ठहरो इह ठाम ? ॥

(३७८)

गुफा माँहि अवलोक उजास, मानो दिनकर किरण-प्रकाश ।
मन में अतिशय अचरज भयो, उतरि विमान भूमि पर गयो ॥

(३७६)

देख्यो कुँवरि गुफा में वास, बल-गुण लक्षण जान्यो तास ।
विद्याधर मन में यों कहै, वन देवी इस वन में रहै ॥

(३८०)

उतरि गगन तें ठाड़ो भयो, भार्या सह गह्वर में गयो ।
मधुमाला आवत देखियो, उच्चासन बैठन को दियो ॥

मातुल-मिलाप

(३८१)

विद्याधर बोल्यो हे मात ! कहो आपनी हमसों बात ।
तुम हो कौन ? तुम्हारो धाम, माता-पिता कौन तुम नाम ? ॥

(३८२)

बीहड़ वन जो अति भयभीत, बाधक निकट बसें विपरीत ।
एकाकी तुम बिन आधार, रहो गुफा में कौन प्रकार ? ॥

(३८३)

विद्याधर की सुनि कै बात, दासी बोली सुनियो तात ।
पूछो भेद सबै तुम भलो, सो सब सुनो कहों पाछिलो ॥

(३८४)

नगर महेन्द्र बसै सु विशाल, तहँ महेन्द्र खेचर भूपाल।
हृदवेगा सोहै तिन प्रिया, नाम अंजनी ताकी धिया॥

(३८५)

पुटभेदन प्रह्लाद नरेश, त्रिया केतुमति नाम विशेष।
ताके आत्मज पवन कुमार, रूपवंत गुणवंत अपार॥

(३८६)

लंका चले पवन बलवीर, ठहरे मान सरोवर तीर।
देख्यो चकवा चकई विछोह, काम-वाण से व्याकुल होह॥

(३८७)

तजि के सकल सैन्य परिवार, गयो गुप्त निज रमणी द्वार।
कर संयोग दियो रति-दान, गये पवन पुन लंका थान॥

(३८८)

सुन्दरि योग गर्भ तहँ रह्यो, भेद सासु केतुमति लह्यो।
दियो कलंक पाप मति बुरी, हाथ पकड़ काढ़ी सुन्दरी॥

(३८९)

अंजनि गई पिता के थान, तिहिं पुनि काढ़ी कर अपमान।
सब व्यवहार पाछिलो जान, यातें अंजनि है यह थान॥

(३९०)

दासी तें यह सुनि सब बात, भयो कलेश पसीज्यो गात।
खेचर कहे सुता तुम सुनो, निज परिचय मैं तुम सों भनो॥

(३६१)

द्वीप हनूवर उत्तम थान, भूपति तासु विचित्र सुजान।
तासु त्रिया घर सुन्दर माल, प्रतिसूरज है ताके बाल॥

(३६२)

अंजनि सुनत भयो सुख घनो, जब जान्यो मामा आपनो।
उठि के वेगि पसारे हाथ, कियो रुदन भेंटी भरि हाथ।

(३६३)

सत्य-वचन प्रति सूरज कह्यो, सुन्दरि हिये बहुत सुख लह्यो।
पूंछी मातुल कर उपचार, मंगल-कुशल बात व्यवहार॥

(३६४)

शीघ्र ज्योतिषी लियो बुलाय, जन्म कुँडली ली बनवाय।
बरस-मास-तिथि-दिन नक्षत्र, लिखो जन्म बालक को पत्र॥

(३६५)

कहे ज्योतिषी सुनुहु सुजान, बैठे रवि अति ऊँचे थान।
चैत्र मास अष्टमि सित पक्ष, श्रवण नखत शिशु जयो सुलक्ष॥

(३६६)

ग्रह नक्षत्र बैठि शुभ राश, काल कुजोग न दीखे पास।
पुत्र अधिक बलवंत सुजान, इसी देह पावै निर्वान॥

(३६७)

जान्यो वचन ज्योतिषी तनो, मन आह्लाद सु उपज्यो घनो।
मन वाँछित धन दीनो दान, गयो ज्योतिषी अपने थान॥

हनुवर द्वीप गमन

(३९८)

प्रतिसूरज तब कहै विचार, हनूद्वीप अब चलहु कुंवारि ।
भेटों सब मातुल परिवार, जन्म महोत्सव करो अपार ॥

(३९९)

सुनी बात बोली अंजनी, मातुल बात कही मम तनी ।
करो न देर ले चलो विमान, चलो वेग हनूद्वीप महान ॥

(४००)

रच विमान सुदन्र सुविशाल, घंटा घुंघरू मोतिन माल ।
हीरा मानक कंचन चुनी, आन्यो तहाँ जहाँ अंजनी ॥

(४०१)

तिहिं थानक आये वनदेव, अंजनि भक्ति करी स्वयमेव ।
णमोकार मंत्र मन ध्याय, पुत्र सहित तहँ बैठी जाय ॥

जाको राखे साईंयां......

(४०२)

उड्यो विमान उच्च आकाश, पाँचो जन-मन भये विकाश ।
बालक खेलत उछल्यो हात, पर्वत ऊपर भयो निपात ॥

(४०३)

फूटो पर्वत भई आवाज, मानहु चकिया पीस्यो नाज।
खेले भूमि अंजिनी नंद, मानहु धरती ऊग्यो चंद ।।

(४०४)

भू पै पर्यो देखि सुकुमार, विलख अंजनी करी पुकार ।
अहो पुत्र ! दीनो दुख मोहि, जीवित कब देखूंगी तोहि ।।

(४०५)

रुदन सुनत मातुल दुख भर्यो, पर्यो कुमार उतरि तहाँ गयो ।
देखी शिशु की क्रीड़ा भली, हाथ-पाँव चूसे अङ्गुली ।।

(४०६)

देख्यो थान जहँ पड्यो कुमार, पर्वत चूर भयो सब क्षार ।
जान्यो कुँवर महा बलवीर, पुण्यवंत यह चरम शरीर ।।

(४०७)

लियो उठाय हर्ष अति भयो, धर्यो विमान शीघ्र तँह गयो ।
पुत्र अंजनी दीनों जाय, शीश चूम रहि कंठ लगाय ।।

(४०८)

उपज्यो प्रेम प्रफुल्लित देह, अग्नि लगे ज्यौं बरसै मेह ।
चुम्बन करती बारम्बार, उपज्यो पुत्र जगत आधार ।।

———

जन्म-महोत्सव

(४०९)

गयो विमान हनूवर द्वीप, मेल्यो उपवन-भवन समीप।
प्रतिसूरज जब यह मत कियो, भेद नगर लोगनि को दियो ॥

(४१०)

रोपहु ध्वजा महल बाजार, घर घर बांधो बन्दनवार।
आयो सभी कुटुम परिवार, मातुल गृह ले चलो कुमार ॥

(४११)

बाजे नौबत नाद निशान, चारण गावें विरद बखान।
करि उछाह आगे हो लई, पुत्र सहित जिन मन्दिर गई ॥

(४१२)

बालक जनम महोत्सव भयो, बहुत दान बन्दीजन दयो।
तीर्थङ्कर पूजे धरि भाव, मन वाँछित अति कियो उछाव ॥

(४१३)

मिल कर सब ने कियो विचार, नाम दियो तसु 'हनू' कुमार
अंजनि बालक सखो समेत, निवसें त्रय ननिहाल निकेत ॥

पवन-प्रत्यावर्तन

(४१४)

अंजनि मातुल के घर रई, सुनहु कथा जो आगे भई।
गयो पवन दशमुख की सेव, रह्यो बहुत दिन लंका एव ॥

(४१५)

रावण से तब आज्ञा पाय, चले पवन निज गृह हरषाय।
पुटभेदन जब गये कुमार, आयो राज बधावो द्वार॥

(४१६)

खबर दूत राजा को दई, पुत्र आपको आयो सही।
सुनी बात नृप को सुख भयो, दान-मान ताको बहु दयो॥

(४१७)

सज गई नगरी सज गये द्वार, घर घर बाँधे बन्दनवार।
भेरी और निशान समेत, चले राय सुत स्वागत हेत।

(४१८)

थाली हाथ दही अरु दूब, गावत चलीं नारियाँ खूब।
माथ चूम पुटभेदन राय, रहे पवन को गले लगाय।

(४१९)

कुशल क्षेम बूझी सुखसार, पहुँचे मन्दिर पवनकुमार।
प्रथम पौर की सीढ़ी चढ़े, असकुन देख नहीं पग बढ़े।

(४२०)

तातें जिनवर मन्दिर आय, देव शास्त्र गुरु नमन कराय।
एक घड़ी लीनो विश्राम, मात-पिता के पहुँचे ठाम॥

(४२१)

भेंटी माता सह परिवार, बूझी कुशल बात व्यवहार।
सब जन अति सन्तोषित भये, पवनञ्जय अन्तःपुर तब गये॥

वियोगी पवन की अन्तर्वेदना

(४२२)

देखो सूनो सब आवास, ऊँची-नीची लेंहि उसांस ।
बूझो मित्र विया कित गई, मेरे मन अति चिन्ता भई ॥

(४२३)

दृष्टि दिखाई न देवे नार, सूनो घर अरु शयनागार ।
अन्तःपुर वासी नर एक, कहो हाल सब पिछलो नेक ॥

(४२४)

भयो पवन सुन विकल शरीर, चिन्ता व्यापी अधिक प्रवीर ।
पवन कहे सुन मित्र विचार, चलो नगर माहेन्द्र कुमार ॥

(४२५)

अंजनि बिन मुझ रहो न जाय, दाहे देह बहुत अकुलाय ।
दोऊ मित्र चले तत्काल, मात-पिता नहिं जानो हाल ॥

(४२६)

कालमेघ गज होय सवार, युगल सखा पहुँचे ससुरार ।
राय महेन्द्र आगमन जान, लेन कुंवर को कियो प्रयान ॥

(४२७)

कर सन्मान भवन में ल्याय, कनक सिंहासन पर बैठाय ।
घड़ी एक श्वसुर ढिग रह्यो, उठे पवन गृह भीतर गयो ॥

(४२८)

दासी सों यो पूंछन लगे, कहाँ अंजिनी हे सुभगे ? ।
दासी सुन बोली तिहि वार, कह्यो पाछिलो सब व्यौहार ।।

(४२६)

क्रमशः सुनी पवन सब बात, भयो हृदय पर वज्राघात ।
सास श्वसुर को भेद न दयो, गुप्त कुंवर गढ़ बाहर भयो ।।

(४३०)

दियो मित्र को घरे पठाय, मात-पिता मत कहियो जाय ।
मित्र प्रहस्त कियो प्रस्थान, पवन गयो वन निर्जन थान ।।

(४३१)

महा अरण्य देखियो जहाँ, दिनकर किरण न प्रसरै तहाँ ।
उत्तम क्षमा करी कर जोर, वन में हाथी दीनों छोर ।।

(४३२)

सघन वृक्ष छाया हो रही, रात दिवस तहँ सूझे नहीं ।
पवनञ्जय तिस भीतर गयो, बैठि तहाँ दृढ़ आसन लयो ।।

(४३३)

ले संन्यास दृष्टि नासाग्र, मन-वच-काय किये एकाग्र ।
अंजिनि खबर देय जब कोय, ग्रहण अन्न-पानी तब होय ।।

(४३४)

हाथी स्वामी भक्ति वशात्, फिरै पास ही दिन अरु रात ।
स्वामी की बहु रक्षा करै, दुर्जन जीव न ढिग संचरै ।।

पवन प्राप्ति के प्रयास

(४३५)

मित्र गयो पुटभेदन थान, मात-पिता सों कियो बखान ।
समाचार सब क्रम से कह्यो, मात-पिता सुन दुख अति लह्‌यो ॥

(४३६)

राजा कहै प्रहस्त सुन बात, तुमतें भयो कुँवर को घात ।
छोड़ अकेलो वन हि कुमार, मित्र योग्य नहिं यह व्यौहार ॥

(४३७)

कहे मित्र राजा सुन येहु, झूठो दोष नहीं हम देहु ।
जिस वन बिछुरे पवन कुमार, चलो तात ! उस अरणि मझार ॥

(४३८)

राजा पत्र दये सब लोक, मेले विद्याधर धर शोक ।
निकले ढूंढ़न हेतु समस्त, आगे-आगे चले प्रहस्त ॥

(४३९)

देखे वन पर्वत असमान, नदी गाँव को नाहीं मान ।
सिंह गुफा देखी धर ध्यान, दिठि नहिं परे कुँवर को थान ॥

(४४०)

प्रतिसूरज ने पत्री दई, नगर महिन्द्र पहुँचती भई ।
पहुँचो दूत जहाँ प्रहलाद, बाँचत लिखो भयो आह्लाद ॥

(४४१)

कछु यक चिन्ता छोड़ो शोक, पवनञ्जय ढूंढ़े सब लोक ।
सघन वृक्ष वन उत्तम छाँह, खेचर एक विराजो ताँह ।।

(४४२)

देखत ही हस्ती दिठि गई, काल-मेघ पवनञ्जय सही ।
सघन वृक्ष बिच पवन कुमार, फिरै सुहस्ती बारम्बार ।।

(४४३)

घड़ी एक विश्राम न लेय, दुष्ट जीव को जान न देय ।
सब राजा मिल करें विचार, हाथी की चतुराई निहार ।।

(४४४)

गज विलोक कीनो निरधार, इस ही वन है पवन कुमार ।
विद्याधर तहँ एक प्रवीण, चलो सु-गज करिबे आधीन ।।

(४४५)

रची एक हथिनी तत्काल, मायामयि गजगामिनि चाल ।
ताहि देख गज कामी भयो, पवन छोड़ हथिनी संग गयो ।।

मधुर-मिलन

(४४६)

देख्यो सुत राजा प्रहलाद, पायो मन में अति आह्लाद ।
चूमै माथो बारम्बार, ध्यान मग्न देख्यो सु-कुमार ।।

(४४७)

राजा कहे-पुत्र सुन बात, खोलो नैन खड़े तुम तात।
ध्यान योग तुम नाहीं काल, उठि के वेग मिलो हे बाल ॥

(४४८)

हाथ-पांव-तन रहे सुखोय, जैसे विधु पाथर को होय।
मीचे नैन न बोले बात, हालै नहीं एक क्षण गात ॥

(४४६)

रहे बुलाय पिता सब लोग, बोले नहीं रहे धरि योग।
चिंतै मन में अति दुख पाय, तो लौ प्रतिसूरज प्रकटाय ॥

(४५०)

भेंटि नृपति प्रतिसूरज कहे, सुत सह सुन्दरि मम गृह रहे।
सुनकर प्रतिसूरज के बैन, पवन उघारे अपने नैन ॥

(४५१)

सावधान हो बूझी बात, कहो अंजिनी की कुशलात।
प्रतिसूरज सब ब्योरो कह्यो, पवन आदि दे सब सुख लह्यो ॥

(४५२)

राजा लोग सुसज्जित भये, हनुवर द्वीप पवन संग गये।
मिले सभी हनुमंत कुमार, भयो महोत्सव मंगलचार ॥

(४५३)

प्रतिसूरज कीनो सन्मान, कई दिन ठहराये महमान।
भोजन वस्त्र देय उपहार, प्रातः सब कर गये बिहार ॥

(४५४)

प्रतिसूरज घर पवन नरिन्द्र, भोगे भोग शची ज्यों इन्द्र।
बली पुत्र देख्यो सुकुमाल, सुख में जात न जाने काल ॥

वरुण-पराजय

(४५५)

भार्या सह पवनञ्जय रहे, आय दूत रावण को कहे।
प्रतिसूरज अरु पवनकुमार, चलो वेग तुम हो असवार ॥

(४५६)

दशमुख लिखित पत्र अनुसार, सजी सैन्य बहु विविध प्रकार।
दियो राज्य हनुमन्त बुलाय, देश नगर सौंपे हरषाय ॥

(४५७)

मात-पिता सों कहे कुमार, बिदा देहु मो पहली बार।
दशमुख की मैं सेवा करों, देश-धर्म पर तन परिहरों ॥

(४५८)

सुने वचन तब बोलो वायु, नहिं संग्राम योग्य तुम आयु।
बालक पुत्र महासुकुमार, तेरो गमन नहीं व्योहार ॥

(४५९)

कर्कश वचन पिता तुम कहो, मो बालक को भेद न लहो।
बाल-सूर्य जब उदय कराय, अन्धकार सब जाय पलाय ॥

(४६०)

बालक सिंह होई अतिशूर, हस्ती घटा करै चकचूर।
सघन वृक्ष वन अति विस्तार, करे भस्म केवल चिनगार ॥

(४६१)

बालक जो क्षत्री को होय, शूर स्वभाव न छोड़े सोय।
मातुल-पिता करहु परतीत, आऊँ वेग वरुण को जीत ॥

(४६२)

हनु सुन वचन पवन सुख लयो, कुँवर हस्त लै बीड़ा दयो।
वचन पुत्र तेरे परमान, चलो सैन्य सज लंका थान ॥

(४६३)

पितृ प्रदत्त शस्त्र जब लये, तब हनुमंत जिनालय गये।
देव-शास्त्र-गुरु वंदन कियो, सब कुटुम्ब मिलि भोजन कियो ॥

(४६४)

गमन हेतु हनु कियो प्रयान, हाथी घोड़े धरे पलान।
मिले पिता मामा परिवार, चले लंक प्रति हनू कुमार ॥

(४६५)

भये शकुन शुभ चलती बार, बायें देवी करैं फिकार।
बायें तीतर बायें व्याल, बायें सारस सुंड सयाल ॥

(४६६)

बायें घुघुआ घूमे घने, फल स्वरूप यह यशस्वी बने।
बायें सुनहा ठोके कंध, मिलें कुशल सब भाई बंध ॥

(४६७)

बायें सिंह गर्जना करे, बायें गर्दभ स्वर अति भरे।
आई फिर बायें लोखरी, बांधे शत्रु हनू इक घरी ॥

(४६८)

कुंभ-कलश दोऊ जल भरे, त्रिया संभारे शिर पर धरे।
पन्नग मल्ल लोह ना हिने, ऐते शकुन भये दाहिने ॥

(४६९)

भये शकुन रण-भेरी बजी, चली जाय सब सेना सजी।
रहे विमान गगन सब छाय, सूरज किरण न कहूँ दिखाय ॥

(४७०)

वेगि लंक पहुँचे हनुमंत, रावण स्वागत कियो तुरंत।
सन्मुख आय विनय अति कियो, कंठ लगाय हनू भेंटियो ॥

(४७१)

अर्द्धासन बैठन को दियो, दे तँबोल सन्मानित कियो।
रूप तेज अति देख्यो घनो, भयो हर्ष मन रावण तनो ॥

(४७२)

दिन गत भयो अस्तगत भान, सब मिल हर्षाये हनुमान।
पंछी गये आपने थान, मुनिवर नाथ रहे धरि ध्यान ॥

(४७३)

गई रयन हो गयो प्रकाश, अंधकार को भयो विनाश।
सेना सहित चले दसशीष, वरुण नगर घेर्यो चहुँदीश ॥

(४७४)

वरुण राय सुभटन से कहे, पुत्र शतक तब साथ रहे।
सेना वाहन ले सब चढ़े, वेग आय दशमुख से भिड़े॥

(४७५)

स्वामी से ले ले आशीष, दोऊ दल काटें रिपु शीश।
करैं परस्पर शस्त्र प्रहार, ज्यों वसंत खेलें हुरिहार॥

(४७६)

वरुण तनय परचंड कुमार, दशमुख सैन्य करी संहार।
रावण घोर संकट में पर्‍यो, दीन्हीं आज्ञा हनु शिर धर्‍यो॥

(४७७)

डारी जाय पाँस लंग्गूर, बांधे कुँवर कियो दल चूर।
कपिध्वज जब पेल्यो रथ साजि गयो वरुण तब नगरी भाजि॥

(४७८)

सुनी नृपति की ज्यों ही हार, हुआ शोरगुल नगर मझार।
ढाहे कोट पौर आवास, लूटी वस्तु सुभट चहुँ पास॥

(४७९)

हनुमत बन्दी वरुण बनाय, सन्मुख ताहि लंकपति लाय।
भयो वरुण को चित्त उदास, नत मस्तक हो खड़ो हताश॥

(४८०)

कहे वरुण सों यों लंकेश, निरपराध हो आप विशेष।
क्योंकि पीठ नहिं आप दिखाई, क्षत्री कुल की रीति निभाई॥

(४८१)

सुनी वरुण रावण की बात, छोड्यो शोक हरषियो गात।
हाथ जोड़ रावण से कह्यो, हम अपराध कर्‌यो तुम सह्यो ।।

(४८२)

तदनन्तर नृप हनु पै गयो, दीन वचन यों सन्मुख कह्‌यो ।
मुझ पर कृपा करहु हनुमान, मुक्त करो सुत दया निधान ।।

(४८३)

वरुण वचन सुनकर हनुमंत, भये दया पूरित अत्यंत ।
फांस लांगुरी लई बहोर, पुत्र शतक सब दीन्हे छोर ।।

प्रणय—बन्धन

(४८४)

देख्यो राय हनू बलवीर, रूप-कला-गुण-साहस धीर ।
दीनी पुत्री कर उत्साह, अगनि साक्ष्य दे भयो विवाह ।।

(४८५)

दशमुख दियो वरुण सन्मान, पुंडरीक पुर कियो प्रदान ।
दलबल सैन्य अधिकतम दयो, रावण लंका वापिस गयो ।।

(४८६)

हनूमान को कर बहु मान, धन धान्यादिक किये प्रदान ।
चन्द्रनखा पुत्री परिणाय, जो अनङ्ग पुष्पा कहलाय ।।

(४८७)

राज-कलश ढ़ारे बहु मान, कुण्डलपुर दीनो शुभ थान ।
रावण बोले सुन हनुमंत, मम सेवा कीन्ही अत्यन्त ।।

(४८८)

तुम समान नाहीं बलवंड, सेना शत्रु करो शत खंड ।
कठिन काम जो करै न कोय, वह सब क्षण में तुम तें होय ।।

(४८९)

हनूमान को मस्तक नाय, मिले अंक भरि दशमुख राय ।
गयो वेग कुण्डलपुर थान, करै राज्य सो इन्द्र समान ।।

(४९०)

अन्तःपुर में भोगे भोग, राखे सुखी नगर के लोग ।
सेवा करें विविध भूपाल, सुख में जात न जाने काल ।।

(४९१)

एक दिवस बैठे हनुमान, दूत एक आयो तिहिं थान ।
करि जुहारु वह ठाडो भयो, लिखित पत्र हनुमन्तहिं दयो ।।

(४९२)

पुर किष्किधा द्वीप विशाल, राज करै सुग्रीव नृपाल ।
ताके घर है सुन्दर नार, रूप-कला गुणवन्त अपार ।।

(४९३)

ताकी पुत्री पदमावती, विविध कला शुभ लक्षणमती ।।
तास रूप लावण्य निहार, करो विवाह चढ़ि हो असवार ।।

(४६४)

देख्यो हनू रूप समुदाय, पूछे मंत्री सेवक राय।
सब कुटुम्ब की आज्ञा पाय, किष्किंधापुर पहुँचो जाय॥

(४६५)

सब सुग्रीव सुन्यो व्योहार, कियो बहुत शुभ-शिष्टाचार।
सह परिवार सामने गयो, कंठ लगाय हनू भेंटियो॥

(४६६)

वेदी मंडप रची विशाल, बाँधे तोरण मोतिन माल।
वर-कन्या हथ-जोरो भयो, विज्ञ साक्षि वैश्वानर दयो॥

(४६७)

झारी हाथ धरी सुग्रीव, हनु अञ्जुलिजल भर्‌यो अतीव।
पुत्री हस्ती हेम सुजान, ग्राम-देश-पुर-पट्टन थान॥

(४६८)

सज्जन जन बैठे तिहिं ठाम, दान मान दे राख्यो नाम।
यथा युक्त कीनो आचार, गये कुंड पुर हनू कुमार॥

(४६९)

करे राज अति इन्द्र समान, देश नगर गढ़ ग्राम निधान।
दुर्जन कोई धीर न धरें, भूचर खेचर सेवा करें॥

(५००)

जिनवर देव धर्म गुरु भक्ति, मल मिथ्यात्व व्यसन सब त्यक्त।
विधि पूर्वक दे चारों दान, नितप्रति पात्र कुपात्र पिछान॥

(५०१)

व्रत-तप शीलाचार उपास, देव-शास्त्र-गुरु प्रति विश्वास ।
सिद्धालय पहुँचे जे जिना, तिनकी पूजा करे वन्दना ।।

(५०२)

चोर चुगल नहिं पलभर जियें, गाय सिंह जल साथहिं पियें ।
पालै प्रजा न्याय आचरै, हनू राज्य कुण्डलपुर करै ।।

सन्देश-वाहक

(५०३)

सभा सहित बैठे हनुमन्त, दूत एक तहँ आय तुरन्त ।
किष्किधा सुग्रीव नरेश, लिखित पत्र दीनो सन्देश ।।

(५०४)

बाँचो लिखो लेहि हनुमन्त, भयो शोक अति तव मन चिन्त ।
खरदूषण को सुनो निपात, अरु संवूक बंदि की बात ।।

(५०५)

मन में शोक कियो अति घनो, मरण जानियो स्वसुरा तनो ।
पुष्प अनंग बहुत बेजार, पिता पिता कर रही पुकार ।।

(५०६)

स्वजन बन्धु समझावन आय, राखो चित्त स्वस्थ करि ठाय ।
करि स्नान देव पूजिया, कीनी सबै पिता की क्रिया ।।

(५०७)

दूजे दिन इक आयो दूत, दियो पत्र इक पवन-सपूत ।
सीता-हरण आदि सब बात, कही राम लछमन कुशलात ॥

(५०८)

रामचन्द्र कृत जो उपकार, प्रति सुग्रीव कह्यो व्यवहार ।
तारा मुक्त करी श्रीराम, सो सब सुनी बात अभिराम ॥

(५०९)

हनूमन्त मन में चिन्तयो, रामचन्द्र शुभ कारज कियो ।
अपहर्ता को करि संहार, सुग्रीवहिं सौंपे अधिकार ॥

(५१०)

करें काम जो राघव कहे, क्षत्रिय धर्म हमारे रहे ।
करहिं न जो नर प्रत्युपकार, बने हास्य अपयश भंडार ॥

(५११)

घोर कृतघ्नो वह कहलाय, तासु भार धरती थर्राय ।
जीव-दया बिन धर्म पलाय, मानुष जन्म निरर्थक जाय ॥

(५१२)

दलबल सेना सजी अपार, किष्किधापुर गये कुमार ।
मिले आय सुग्रीव नरिन्द, बूझी कुशल भयो आनन्द ॥

(५१३)

भूचर-खेचर जेते राय, हनू देख मन कियो उपाय ।
तथा जुगल भेटियो लोग, समाधान कह योगायोग ॥

(५१४)

सब राजा एवं सुग्रीव, गये राम ढिग हनु चिरजीव।
रामचन्द्र देख्यो हनुमन्त, तजि आसन उठियो विहसंत ॥

(५१५)

हनू लगायो चरननि माथ, रामचन्द्र भरि भेंटे हाथ।
भयो हरष अति अंग नमाय, अर्द्धासन दीनो रघुराय ॥

(५१६)

अति संकोचित हो हनुमंत, बैठे राम समीप तुरन्त।
अति विनम्र हो बारम्बार, पूछी कुशल प्रीति व्योहार ॥

(५१७)

राजा सभी भये एकत्र, सीता की चिन्ता सर्वत्र।
हँस बोले श्री लखनकुमार, जीतहु लंका किसी प्रकार ॥

(५१८)

मारो रावण ले धनु-बान, ल्याओ सिया राम की आन।
नल अंगद बोले सुग्रीव, कारज धीरे होंय सदीव ॥

(५१९)

बुबे बीज धीरे फल ल्याय, धीरे मुनिवर शिवपुर जाय।
धीरे विद्या सीझे रिद्धि, धीरे होंय काम सब सिद्धि ॥

(५२०)

पहिले चुन लो नेता एक, तब कछु काम करहु सविवेक।
एक साथ बोले सब कोय, कारज यहै हनू तें होय ॥

(५२१)

दशमुख राखे याको मान, सिंहासन पर दे-स्थान।
बोले हनू सुनो हे तात, सिर माथे पंचन की बात।।

(५२२)

सुनो सुनो हे रघुपति राय, ल्याहों सिया वेग ही जाय।
बोले राम सुनो हनुमंत, तुम समान नहिं पौरुष वंत।।

(५२३)

बालापन गिरि कीनो छार, बांधे सौ सौ वरुण कुमार।
तुम प्रचण्ड अति साहस धीर, क्षत्रिन मध्य महा वरवीर।।

(५२४)

क्रूर-कपट नहिं मन में भाव, पर उपकारी शुद्ध स्वभाव।
करहु शीघ्र लंका प्रस्थान, कारज सिद्ध करो हनुमान।।

(५२५)

सीता प्रति संदेशो कहें, राम-लखन किष्किधा रहें।
राम दुखी तुम तनें वियोग, विष समान छोड़े सब भोग।।

(५२६)

रात-दिवस लें तुम्हरो नाम, घड़ी एक नहिं लें विश्राम।
कहियो सिया छुड़ाऊँ तोय, सफल जन्म तब मेरो होय।।

(५२७)

सिया हरण पै कछु नहिं करै, ताके भार धरणि धर हरै।
और संदेशो कहो कुमार, जपो मंत्र निशि-दिन नवकार।।

(५२८)

जिनवर वचन हिये में धरो, मल मिथ्यात्व सबै परिहरो।
रहित अठारह दोष सुदेव, गुरु-निर्ग्रन्थ शास्त्र की सेव ॥

(५२९)

वाणी जिनवर मुख तें खिरी, इनकी दृढ़ता चित में धरी।
संयम शील सकल आचार, दान-भाव श्रावक व्यौहार ॥

(५३०)

त्यागो मत, जो जाय शरीर, सिया संदेशो कहियो वीर।
हीरा रतननि कुन्दन जरी, निज निशानि दीनी मुन्दरी।

उपसर्ग-निवारण

(५३१)

हनू राम सों भयो जुहार, मिले स्वजन बान्धव परिवार।
णमोकार उच्चारण कर्‌यो, बैठि विमान गगन उड़ि गयो ॥

(५३२)

लंका-गढ़ परवत वन माल, लाँघी नदी-सरोवर-ताल।
जाय विमान गगन पथ चढ़्यो, हनू दृष्टि दधिमुख वन पर्‌यो ॥

(५३३)

शार्दूल-चीते विकराल, घूमें हिरन सुँअर अरु स्याल।
करें शब्द अति वन में घनें, देखे चारण मुनि दो जनें ॥

(५३४)

तहँ दँवार लागी चहुँ पास, पँक्षो भाग चले आकाश ।
धुंआधार छायो अँधियार, हनु मुनि देखे दृष्टि पसार ।।

(५३५)

देख्यो कष्ट ऋषी द्वय तनो, जल समुद्र ते लायो घनो ।
अग्नि ज्वाल को दई बुझाय, भाव शुद्ध कर वंदे पाँय ।।

(५३६)

कियो विनय बैठे तिहिं ठाम, मुनि उपदेश दियो अभिराम ।
नमस्कार कर आगे बढ़्यो, हनू विमान अचानक अड़्यो ।।

युद्ध और परिणय

(५३७)

करै कुमार हिये में चिन्त, कै मुनिवर कै कोई मिन्त ।
कै जिन-भवन शत्रु को थान, कौन हेतु सों रुक्यो विमान ।।

(५३८)

मंत्री बोले सुनहु कुमार, गढ़ इक दीखे अति-विस्तार ।
खाई कोट सों घिरो विशाल, घूमें यक्ष सिंह विकराल ।।

(५३९)

सुनत बात अति उपज्यो कोप, आयुध लयो चक्र आरोप ।
राक्षस मार कर्‌यो जहँ छार, ताहि दुर्ग में गयो कुमार ।।

(५४०)

गुफा एक देखी भयभीत, निकस्यो सिंह महा विपरीत।
प्रखर दंत नख रोमावली, जिह्वा जिमि अग्नि प्रज्वली ॥

(५४१)

विघ्नावलि सब करि निःशेष, कियो नगर में हनू प्रवेश।
वैभव युक्त वज्रमुख नाम, देखत ही लूट्यो सब ग्राम ॥

(५४२)

चढ़ि आयो राक्षस करि कोप, जैसे मेघ घटा-आटोप।
दीरघ दंत महा विकराल, आयो जहाँ अंजनी-बाल।

(५४३)

खड्ग बाण विद्या सों भिड़्यो, बंदर सेना दस गुनि कर्‌यो।
देख्यो राक्षस अति बलवंत, मन में कष्ट भयो हनुमंत ॥

(५४४)

कर्‌यो रोष वानरपति घनो, हाथ चक्र लै राक्षस हनो।
सुनी बात लंका सुंदरी, मरण पिता सुन अति दुख भरी ॥

(५४५)

कुपित होय वह ठाड़ी भई, चमकत-धमकत हनु पै गई।
खोटो वचन जु मुख तें कह्‌यो, मास एक मैं भूखजु सह्‌यो ॥

(५४६)

अब मन वांछित पूरे काज, तुम पहुँचे मरघट को आज।
पवन-पूत बोल्यो किलकंत, जैसे मदमात्यो गजदंत ॥

(५४७)

तू नारी मैं हूँ नरनाथ, तो पै नहीं उठाऊँ हाथ।
सुन कर लंका सुंदरि क्रुद्ध, तत्पर हुई करन को युद्ध ॥

(५४८)

घाले सुन्दरि बाण अनेक, हनू शरीर न लाग्यो एक।
बहुत भाँति बीत्यो संग्राम, सेना सुभट न छांड़े ठाम ॥

(५४९)

देख्यो पौरुष क्षत्री तनो, मन में अचरज कीनो घनो।
सुभट लड़ाई जीती घनी, भई अधीन त्रिया इन तनी ॥

(५५०)

सुन्दरि देख्यो रूप कुमार, जैसो कामदेव अवतार।
काम-बाण सों वेधी गई, वीतराग देख्यो सो भई ॥

(५५१)

या संग भोग भोगऊँ घनो, सफल जन्म तब ही हम तनो।
भेजो पत्र बांध मुख बाण, होवहु कंत बचें मम प्राण ॥

(५५२)

बाण-पत्र जब पहुँच्यो तहाँ, बाँचि ताहि हनु प्रमुदित महाँ।
तज्यो कोप अति भयो सनेह, आग लगे ज्यों बरसे मेह ॥

(५५३)

बैठे हनु-सुन्दरि एकान्त, बाह्योपचारों के उपरान्त।
काम-बाण से पीड़ित भई, पिता मरण की विस्मृति लई।

(५५४)

भाई पुत्र सगो नहिं तात, सजन कुटुम्ब न पुत्री मात।
कोई किसी को सगो न होय, स्वारथ अपनो साधै सोय।

(५५५)

लंका सुन्दरि पूछ्यो कंत, आये कौन काज हनुमंत।
मेरे मन उपज्यो संदेह, कहो वार्ता तुम सस्नेह ॥

(५५६)

बोले हनू सुनो सुन्दरी, रामचन्द किष्किंधापुरी।
दशमुख हरी राम की सिया, ताहि खोजने निकले प्रिया ॥

(५५७)

बीच हमारो रुक्यो विमान, देख्यो नगर तुम्हारो थान।
मम निमित्त पितु मृत्यु नियोग, हम तुम भयो प्रीति संयोग ॥

(५५८)

सुंदरि बोली सुनिये कंत, रावण दुष्ट महा बलवंत।
यदि तुम करहु राम की बात, शीश तुम्हारो करिहै घात ॥

(५५९)

चौदह सहस सुविद्या सिद्धि, भोगे अर्द्धचक्रि की रिद्धि।
भूचर-खेचर सेवक रहें, सो क्यों बोल तुम्हारे सहे ॥

(५६०)

बोले हनू सुन्दरी सुनो, कथन तुम्हारो हमने गुनो।
कीजे सुकृत पर उपकार, धर्म अफल ज्यों रात अहार ॥

(५६१)

दान बिना निरफल गृह देश, ज्यों आडम्बर युत मुनि-भेष।
यही जान कीजे उपकार, दान-शील-संयम-आचार ॥

(५६२)

लेहि क्रिया सह सम्यक् ज्ञान, होय सुयश पावै निर्वान।
दशरथ नन्दन गुण गंभीर, पर दुख भंजन साहस धीर।

(५६३)

तिनकी सेवा उत्तम धर्म, इससे बढ़कर क्या सत्कर्म?।
व्यापो दुख-सुख हमरी देह, कारज करें राम को येह ॥

(५६४)

सुन्दरि को समझा कर भव्य, तजि वैभव धरियो कर्त्तव्य।
धीर चित्त करि चले महंत, लंका मध्य गये हनुमंत ॥

विभीषण-वार्त्ता

(५६५)

देखी लंका हनू कुमार, योजन सप्त दीर्घ विस्तार।
चौड़ाई योजन चहुँ गुनी, सघन बसी अति शोभा घनी ॥

(५६६)

कोट बुर्ज लागे आकाश, फिरि परिखा आई चहुँ पास।
सप्त द्वार कंगूरे तुंग, चित्र चितेरे किये अभंग ॥

(५६७)

राजा के सतखने निवास, धन कंचन से भरे अवास ।
घर घर पुण्य बधाये होंय, अन्य शब्द नहिं सुनिये कोय ।।

(५६८)

पवन-पुत्र मन में चिन्तयो, गुप्त विभीषण मंदिर गयो ।
द्वारपाल पहुँचाय तुरन्त, जाय कहो ठाड़े हनुमन्त ।।

(५६९)

द्वारपाल गृह भीतर गयो, आये हनू नृपति से कह्यो ।
बोले हर्ष विभीषण राव, अन्दर हनू वेग ले आव ।।

(५७०)

पवन-पुत्र पहुँचे तत्काल, सचिव समेत जहाँ भूपाल ।
आवत देख्यो अंजिनि नंद, आसन छोड़ मिले सानन्द ।।

(५७१)

शिष्टाचार सहित सब हाल, पूछ्यों कुशल क्षेम भूपाल ।
एकहि आसन युगल नरेश, बैठे जिमि नभ चन्द्र-दिनेश ।।

(५७२)

बात विचार कही हनुमंत, सुनो विभीषण राय महंत ।
तुम्हरो कुल निर्मल सुविशाल, उदै-बाहुभये आदि नृपाल ।।

(५७३)

पुत्र राज दे संयम लियो, सुर-नर खेचर पूजन कियो ।
ताहि वंश जे भये नरिन्द, पहुँचे मुक्ति काट भवफन्द ।।

(५७४)

उपज्यो कुल रावण बलिवंड, भोगे राज्य तीनहू खंड।
सहस अठारह जिसकी नार, इन्द्रजीत सम जेष्ठ कुमार ॥

(५७५)

कियो कुकर्म ठान मति बुरी, हर लायो राघव सुन्दरी।
राक्षस गोत्र समुज्ज्वल कह्यो, हर कर त्रिया कलंकित कर्यो ॥

(५७६)

देहु सीख दशमुख को जाय, नारि पराई देहु पठाय।
पर नारी की इच्छा करै, अपयश पाय नरक संचरै ॥

(५७७)

कहे विभीषण हनूकुमार, मैं समझायो बारम्बार।
तजे न सिय, कीनो हठ घनो, पाप उदय आयो तिस तनो ॥

जानकी-दर्शन

(५७८)

सुनें वचन धरियो अभिमान, सीता निकट गये हनुमान।
नंदन वन देख्यो तहँ जाय, फूली फली जहाँ वन राय ॥

(५७९)

कदली जामुन आम नारिंग, दाख छुहारे सेव लवंग।
कमरख कटहर कैंथ अनार, ऐला श्रीफल अपरम्पार ॥

(५८०)

नदी सरोवर उत्तम नीर, कुआँ बावड़ी गहर-गंभीर।
फूले मध्य कमल अति घनें, मधुकर नाद करें रुनझुने ॥

(५८१)

देख्यो हनू सिया को रूप, सुर रमणी तें अधिक अनूप।
मेरु समानहि शील अडोल, निश्चय हिये देव गुरु बोल ॥

(५८२)

गये हनू तब सिया समक्ष, देख सुमुखि तब हर्षित वक्ष।
दृष्टि अगोचर कियो उपाय, बैठे शीर्ष डाल पै जाय ॥

मुद्रिका-निक्षेप

(५८३)

देखी सीता तरुवर छाँह, डारी मुंदरी गोदी माँह।
पड़ी मुद्रिका देखे सिया, विस्मित भई जनक की धिया ॥

(५८४)

लई मुद्रिका कंठ लगाय, जैसे मिले वत्स को गाय।
चन्द्र-वदन सिय भयो अनंद, मानो मिले स्वयं रघुनंद ॥

(५८५)

सीता कहे मुद्रिका सुनो, कहो रहस्य गूढ़ जो बनो।
यामें लिखो राम को नाम, लायो पुरुष कौन इह ठाम ? ॥

(५८६)

राक्षस खड़े अड़े जे द्वार, हर्षित वदन देख रघु-नार। -
सेवक एक गयो तहाँ धाय, कही बात रावण सों जाय ॥

(५८७)

सुनहु स्वामि बात हम तनी, सीता बहुत दिवस अनमनी।
बोलत विहसत देखी आज, मन वाँछित अबहूं है काज ॥

प्रलोभन और फटकार

(५८८)

सुनत बात दशमुख सुख लयो, कारज सिद्ध हमारो भयो।
मंदोदरि प्रेषित सिय पास, करै कपट धरि वाग् विलास ॥

(५८९)

सहस अठारह हैं शुभ नार, तिनमें तुम बनि हो पटनार।
यह तुम्हरो पुण्योदय होय, स्वयं दशानन मोहित होय ॥

(५९०)

राज-भोग भोगो सुख येहु, राम कपटिया पानी देहु।
सुनी बात मंदोदरि कही, तब सीता खिसियानी सही ॥

(५९१)

कहे सिया सुन मंदोदरी, तेरी बात लगे अति बुरी।
रावण महापाप को मूल, और दुःख नहि तासम तूल ॥

(५६२)

जो नारी पर पुरुषहिं सेय, सुकृत शील व्रत सब तज देय।
अपयश होय न पावें सुक्ख, जनम जनम तक भोगें दुःख ॥

(५६३)

राघव बिना और नर नाथ, ते सब भाई अथवा तात।
इह भव राम-नाम आधार, मन वच काय राम भरतार ॥

(५६४)

सुनी बात बोले कपिपती, धन्य धन्य तुम सीता सती।
कंत बात जे नारी भने, तासम पावन किसके गिने ॥

(५६५)

ऊरध वाणी सीता सुनी, हर्ष और चिन्ता में सनी।
कौन पुरुष बोले आकाश, दर्शन देहु होय परकाश ॥

(५६६)

सुनकर हनु तब हर्षित हियो, परगट रूप आपनो कियो।
सिय को घेरें बैठी नार, तिन विच कूदे पवन-कुमार ॥

(५६७)

मंदोदरि अवलोक कुमार, मन ही मन हँसि करे विचार।
शंका रहित रूप अभिमान, आयो कौन अगोचर थान ॥

: १२ :

श्रीराम-सन्देश

(५६८)

हनू युगल कर मस्तक दियो, नमस्कार सीता को कियो।
तुम यश बृहत् सुनो निकलंक, सो प्रत्यक्ष देख्यो निःशंक ॥

(५६६)

तुम समान रूप नहिं नार, संयम-व्रत अरु शीलाधार।
धन्य पिता-माता जिहिं जनी, रामचन्द्र से पाये धनी ॥

(६००)

रघुपति समाचार सुनि माय, लछमन सहित हमारे ठाँय।
करैं दुःख तुम तनो वियोग, विष सम लगें विषय अरु भोग ॥

(६०१)

रात-दिवस है तुम्हरो नाम, लेय न घड़ी एक विश्राम।
राघव कही छुड़ावहुँ तोय, सफल जनम तब मेरो होय ॥

(६०२)

सुनी बात तब कपिध्वज तनी, उपजी अंग उमंगें घनी।
बूझी सीता करि आनन्द, कहो कुशल हैं दशरथ नंद ?

(६०३)

राम वृतान्त हनू सब कह्यो, सीता सुनत बहुत सुख लह्यो।
देहु पुत्र मेरे सिर हाथ, हों चिरजीव लखन रघुनाथ ॥

(६०४)

समाचार जब कपिध्वज कह्यो, मंदोदरि मन अचरज लह्यो।
धन्य राम तेरी सद् बुद्धि, हनू दूत बिन होहि न सिद्धि ॥

(६०५)

सीता कहे सुनहु सुकुमार, पिछलो कहो सकल व्यवहार।
लछमन युद्ध करन जब गयो, सिंहनाद तब वन में भयो ॥

(६०६)

शब्द कान राघव के पर्‍यो, दशरथ नंद कोप तब भर्‍यो।
छोड़ी वन में एकाकिनी, गये नाथ जब लछमन भनी ॥

(६०७)

मुझ हर लायो लंकानाथ, जानो नहीं पाछिली बात।
गढ़ पर्वत सागर-असराल, लंका गढ़ किमि आये बाल ॥

(६०८)

बोले हनू सुनो हे मात ! कहौं पाछिली बीती बात।
लछमन धरि बाँध्यो संबूक, खरदूषण बध कियो अचूक ॥

(६०९)

लंकापति तब बाहर गयो, बीच रूप तेरो लख लयो।
बूझी विद्या अवलोकिनी, या वन में स्त्री किहि तनी ॥

(६१०)

विद्या कही जनक की धिया, सीता नाम राम की तिया।
रचि प्रपंच लंकपति राय, विद्या दीनी एक पठाय ॥

(६११)

सिंह गर्जना विधा करी, राम लक्ष्मण प्रति डम भरी।
रावण तुम को इहि विधि लाय, निर्जन थान निवास कराय ।।

(६१२)

कीनो उज्ज्वल तुम रघुवंश, जैसो उज्ज्वल सुकृत हंस।
दंडक वन फिर आये राम, तुम बिन देख्यो सूनो ठाम ।।

(६१३)

अति अकुलायँ धीर नहिं धरें, पशु पक्षिन से बूझत फिरें।
सीता सीता रटते नाम, वन अटवी देखे सब ठाम ।।

(६१४)

शीश धुनत घूमैं श्रीराम, समाचार बूझें अविराम।
विलखें राम आपनें चित्त, यहाँ न उपस्थित कोई मित्त ।।

(६१५)

बहुत कलेश सहैं रघुनाथ, तब तहँ आये लछमन भ्रात।
सीता-हरण बात तिन कही, दंडक वन तें निकसे सही ।।

(६१६)

कतिपय काल दिवस जब गये, सुग्रीवहिं तब आवत भये।
रामहिं मिले दियो अति मान, किहि कारण आए इहि थान ।।

(६१७)

सुनो बात बोले सुग्रीव, विनती एक सुनो चिरजीव।
कष्ट आपदा उपजी घनी, ता कारण आए तुम तनी ।।

(६१८)

दुष्ट रूप धरि मोहि समान, आयो जहाँ हमारो थान।
करी बुद्धि गृहणी हम तनी, किये कपाट बंद तत्छिनी ॥

(६१९)

अति परचंड अधिक अभिमान, नगर माँहि हम देहि न जान।
होहु सहायक करि उद्धार, फेरि मिलै हमको निज नार ॥

(६२०)

सुनी बात रघुपति तसु तनी, मन में करुणा उपजी घनी।
सीता हरण बात बीसरी, तत्क्षण गये किष्किधा पुरी ॥

(६२१)

मायावी सुग्रीव भगाय, दियो राज्य सुग्रीव बुलाय।
लछमन राम युगल बलवीर, किष्किधा पुरि रहें सुधीर ॥

(६२२)

विद्याधर भूमि गोचरी, बैठि एक मत बुद्धि उच्चरी।
बहुत विचार सबनि मिलि कियो, लंका प्रति मोकूं भेज्यो ॥

(६२३)

सार्थक भयो हमारो काज, श्वसुर हमारे दीनो राज।
प्रत्युपकार न जो अब करौं, अपयश होय नरक जा परौं ॥

(६२४)

सीता सुनो भली इक बात, तत्क्षण करो रावणहि घात।
जिन पुराण माँहि इमि भनो, प्रति केशव को कैसे हनो ? ॥

(६२५)

वाणी वीर जिनेश्वर कही, येहु कथा तुम जानहु सही ।
सीता सुनी हनू को बात, हरष्यो चित्त प्रफुल्लित गात ।।

(६२६)

स्वामि देव तुम भक्त सुजान, तुमरे वचन सही परमान ।
तुम सम कोउ नहीं संसार, काज परायो सारनहार ।।

मंदोदरी-प्रताडना

(६२७)

सुनी बात सब मंदोदरी, कपिध्वज सो बोली रिसभरी ।
तुम प्रचण्ड बल अधिक अपार, वरुण पुत्र के बांधन हार ।।

(६२८)

करी कृपा अति दशमुख राय, बहिन सुता तसु दीनी ब्याय ।
दियो नग्र हस्ती को दान, जामाता को करि सन्मान ।।

(६२९)

कर्म नियोग पवन को पूत, सो पुनि बनो राम को दूत ।
अधिक चतुर नर का नहिं करै, करम फिरावे तेसो फिरै ।।

(६३०)

सुनकर मंदोदरि के बैन, कपिध्वज बोले तत्क्षण येन ।
विद्याधर कुल में उत्पन्न, रावण की रमणी सम्पन्न ।।

(६३१)

इन्द्रजीत सुन मंदोदरी, सो पुनि कर्म कुट्टनी करी ।
सिया कहे सुन मंदोदरी, व्यर्थ नाक कटि जे है अरी ॥

(६३२)

चित्त आपने देख विचार, गर्व न कीजे इह संसार।
भरत गर्व कीनो अति घनो, बाहुबली भीज्यों तिहि तनो ॥

(६३३)

केइक भूपति कीनो गर्व, कैसे नाम गिनावें सर्व ।
वज्रावर्त धनुष जिस हाथ, खरदूषण को करो निपात ॥

(६३४)

श्री लछमन जी ऐसे बली, तासों नहीं शत्रुता भली ।
को रावण ? को लंका ग्राम? कुंभकरन है किसको नाम ?

(६३५)

जब कोपें रघुनन्दन राय, तब तहँ प्रलय शीघ्र हो जाय।
सुन बोली रावण की नारि, अहो उठी अतिवाद निवारि ॥

(६३६)

तूरि काढ़ हू फलन विलेई, दिन दस रामहिं जीवन देई।
सुन कर मंदोदरि के बोल, उठे हनू करिवे भूडोल ॥

सीता की पारणा

(६३७)

जितनी थीं दशमुख की नार, ते दईं वन तें सर्व निकार ।
सीता सन्मुख जोड़े हाथ, करहु पारणा उठि के मात ॥

(६३८)

शोक-विषाद सबै परिहरो, हम पर तुम अनुकम्पा करो ।
मानें वचन हनू के सिया, कर स्नान देव पूजिया ॥

(६३९)

बृहत महोत्सव जिनवर कियो, दिवस बारवें भोजन लियो ।
देख पारणा हनुमत राय, सुमन सिया पर दिये गिराय ॥

उपालम्भ

(६४०)

मंदोदरि रावण प्रति गई, ब्यौरो बार बात सब कही ।
स्वामी तुम भानेज दमाद, चढ़ि आयो सीता प्रासाद ॥

(६४१)

भेज्यो राम गर्व कर घनो, तुम को तो तृण के सम गिनो ॥
सगो सहोदर करहि न कान, नन्दन वन में बैठ्यो आन ॥

(६४२)

हनू करे सीता सों बात, कांधे बैठि चलो हे मात !
चलहु मात मुझ देहु अशीष, ताकि मिलें तुम को तुव ईश ॥

(६४३)

बोली सिया सुनहु हनुमंत, यह तो योग्य नहीं हे संत !
जैसो कर्म उदय में आय, तैसो ही फल देके जाय ॥

(६४४)

देवर लक्ष्मण राधव कंत, जासु सहायक हैं हनुमंत।
देव शास्त्र गुरु जासु सहाय, सो सीता क्यों छिपके जाय ॥

इन्द्रजीत का ब्रह्मपास

(६४५)

कतिपय घड़ी सिया ढ़िग रह्यो, पाछे उपवन देखन चल्यो ।
वन-उपवन देखे चित लाय, वृक्ष जाति बहु गिनी न जाय ॥

(६४६)

स्त्री जन हनु देख्यो रूप, कामदेव सम अधिक अनूप ।
स्वर्ग इन्द्र या नागकुमार, या बल नारायण अवतार ॥

(६४७)

सुनत बात रावण दुख भयो, कुपित होय उठ ठाड़ो भयो ।
किंकर कतिपय दिये पठाय, वेग बांध ल्यावहु इहि ठांय ॥

(६४८)

बिदा लेय किंकर चल दिये, तत्क्षण नंदन-वन में गये ।
क्रीड़ा करे अंजनी बाल, मानहु देख्यो परगट काल ॥

(६४९)

बोले किंकर क्यों रे ढ़ीट, या वन क्यों आयो हे कीट !
महा कृतघ्नी वानर नीच, आई तेरी मृत्यु नगीच ॥

(६५०)

सुनें वचन हो कुपित कुमार, किंकर मार किये संहार ।
बचो एक रावण ढ़िग गयो, विवरण ज्यों को त्यों सब कह्यो ॥

(६५१)

समझ सोच लंकापति राय, सेना बहुतक दई पठाय ।
जीवित बांध लाहु मो पास, नाक-कान कर अंग विनास ॥

(६५२)

गये सुभट जहँ हनुमत ठोर, करो युद्ध अतिशय घनघोर ।
हुए हताहत वीर अनेक, भयो रक्त से भू अभिषेक ॥

(६५३)

मार्‍यो कटक कियो संहार, बचो एक नर किसी प्रकार
दशमुख से जा करी पुकार, गई सब सेना यम के द्वार ॥

(६५४)

अहंकार वश वानर वंश, वन-उपवन कीनो विध्वंस ।
तरुवर जाति न जावे कही, डाल एक नहिं ठाड़ी रही ॥

(६५५)

कुंआ बावड़ी पुष्कर ताल, तोरण मंडप वेदी साल ।
तोड़े मंदिर ध्वजा विशाल, मानो आयो संकट काल ॥

(६५६)

नगर माँहि कोलाहल भयो, वन माली रावण प्रति गयो ।
स्वामी आयो हनू कुमार, वन विध्वंस उड़ाई क्षार ॥

(६५७)

सुनी बात रावण परजर्यो, मानो वैश्वानर घृत पर्यो ।
धनुष-वाण कर लियो उठाय, गयो जहाँ कपिध्वज ठहराय ॥

(६५८)

तब तहँ आयो इन्द्रकुमार, मेघनाद बल अपरम्पार ।
जोड़ हाथ बोले द्वय पूत, देखहु पितु हमरी करतूत ॥

(६५९)

ले आशीष चले द्वय वीर, सेना सहित बढ़े बलवीर ।
रण दुन्दुभि बज उठी विशाल, सेना रौद्र रूप विकराल ॥

(६६०)

क्रुद्ध कपिध्वज कीनी गाज, मानो पंक्षी झपटयो बाज ।
दशमुख नन्दन हनू कुमार, करें परस्पर दोऊ मार ॥

(६६१)

हाथी सों हाथी आ रहे, पालो ले पाले को गहे ।
पैदल को पैदल दे मात, रथी करे रथि को संघात ॥

(६६२)

कायर भागे पीठ दिखाय, कतिपय घुटने टेके आय ।
ये कैं सुभट बहुत बल करैं, टूटे सिर ठाड़े धड़ भिरें ॥

(६६३)

इन्द्रजीत सोचे बलवीर, मैं अरु कपिध्वज चरम शरीर ॥
दोऊ सुभट न टारें टरैं, सेना सुभट व्यर्थ ही मरैं ॥

(६६४)

तब मन मांही कर निरधार, ब्रह्म पाँस डारी तिहिं बार ।
हाथ-पाँव गठ बन्धन कियो, बांध्यो कपि आगे कर लियो ॥

(६६५)

बंदी कपि को हाट घुमाय, जन समूह सों हास कराय ।
करें परस्पर वार्तालाप, कपट रूप सों बंधियो आप ॥

(६६६)

सज्जन कहैं सुनो हे लोग, ऐसो जुर्यो कर्म संजोग ।
कबहूं रंक राय हो जाय, कबहूँ राजा रंक कहाय ॥

(६६७)

बालपने गिरि कीनो छार, वरुण बली ने मानी हार ।
सोई हनु बेड़ी पहराय, नचिये जैसो करम नचाय ॥

(६६८)

जीती लंका सुन्दरि नाम, कीनो उपवन काम तमाम ।
सो कपिध्वज विधना वश पर्यो, ब्रह्म फाँस ते नग नग बंध्यो ॥

(६६९)

कबहूँ नाव शकट पै रहे, कबहूं शकट नाव पै बहे।
एक कहे झूठो आलाप, करि पाखंड बंधायो आप ॥

(६७०)

या सम सुभट न कोई धीर, क्षत्रिय मध्य महा बलवीर।
एक कहे तू झूठहि भने, तेरे वचन असत से सने ॥

(६७१)

कभी पुरुष सुख क्रीड़ा करे, कभी मांगतो दर दर फिरे।
तब तक इन्द्रजीत ले गयो, रावण सन्मुख प्रस्तुत भयो ॥

(६७२)

लेहु पिता यह हनूकुमार, देहु सजा जैसो व्यवहार।
बोल्यो दशमुख सुन हनुमंत, तुम हो मम भानेजन कंत ॥

(६७३)

मम रिपु के बन आये दूत, तुम सम दूजो कौन कपूत।
सुन रावण के वचन कठोर, मुखर भये तब पवन-किशोर ॥

रावण-भर्त्सना

(६७४)

जिस कुल उपजे पुरुष-पुराण, पूर्वज गण पहुँचे निर्वाण।
ऐसो उज्ज्वल राक्षस वंश, जैसो उज्ज्वल मानस-हंस ॥

(६७५)

कियो कलंकित बनकर काक, सीता हर कटवाई नाक।
था जो पितु को तेज प्रताप, जिसपै फेर्यो पानी आप॥

(६७६)

सोवत सिंह जगाये राम, भयो मृत्यु को यह पैगाम।
जीवित रहने की हो चाह, तो सिय रामहु देहु पठाय॥

(६७७)

जैनागम में है विख्यात, मौत तुम्हारी लक्ष्मण हात।
पश्चिम दिशि रवि उदय जो होय, भले असंभव संभव होय॥

(६७८)

काल-योग वश मेरू गिरे, जिनवाणी नहिं मिथ्या झिरे।
हम जिनधर्म चित्त में धरें, अन्यायी को संग न करें॥

(६७९)

परनारी पर डार्यो हाथ, तातें तज्यो तुम्हारो साथ।
मूरख पुत्र कुचारी नार, पर-रमणी रत हो भर्तार॥

(६८०)

दुष्ट भूप की सेवा करै, तिसको वेग पुण्य परिहरै।
तुम हो तीन खंड के धनी, तेज कीर्ति फैली है घनी॥

(६८१)

सागर अंत लोक वश किया, चोरी करिकै लाये सिया।
परनारी जे संगति करैं, अपयश होय नरक संचरें॥

(६८२)

सीख हमारी करहु प्रमान, भेजहु सिया राम के थान।
और बात इक सुनियो देव ! रामचन्द्र शिवगामी एव ॥

(६८३)

संयम सदाचार में दक्ष, हम क्यों छोड़ें ताको पक्ष।
सुनि बोल्यो रावण धर मान, अरे चपल वानर नादान ॥

रावण का अहंकार

(६८४)

कहँ के लछमन कहँ के राम, मैं नहीं जानो इनको नाम।
वन-फल भखें, कुटी में बास, दीनो दशरथ देश निकास ॥

(६८५)

शस्त्रहीन और राज्य विहीन, निःसहाय कायर अरु दीन।
वन में सदा वधिक सो फिरै, सो लंका कैसे संचरै ॥

(६८६)

मुझ सम बली अन्य नृप नहीं, मम पौरुष तुम जानो सही।
भाई कुंभकरण बडमल्ल, मानो दुष्टों के शिर सल्ल ॥

(६८७)

इन्द्रजीत अरु मेघ कुमार, तिनका विक्रम अपरम्पार।
नर-विद्याधर सेवा करें, निशि वासर वे ठाड़े रहैं ॥

(६८८)

नव-निधि रत्न भरे भण्डार, रथ हाथिन को लहै न पार ।
पैदल सैनिक रहें असंख, स्वर्ग समान स्वर्ण की लंक ॥

(६८९)

तुंग कोट को ओर न छोर, घेरे सागर चारों ओर ।
गुर्ज कंगूरे अधिक उतंग, निर्मित गोलाकार अभंग ॥

(६९०)

विस्तृत कौन बढ़ावै बात, वस्तु पदारथ नाना भाँत ।
ठाठ-बाट मम इन्द्र समान, राक्षस वंशज लंका थान ॥

सीख सुनो लंकापति राय

(६९१)

सुनिकें बात कपिध्वज भनो, जो उपज्यो सो विनसै सुनो ।
बारह भावन भावो भूप, क्षण भंगुर है जगत स्वरूप ॥

द्वादश-अनुप्रेक्षा

अनित्य-भावना

(६९२)

राजन ! यह संसार असार, इन्द्र-धनुष सम जग-व्यवहार ।
हाथी-घोड़े रथ असवार, इन्हें न कोई बचावन हार ॥

(६६३)

ज्यों अँजुलि को झरि है नीर, क्रमशः छीजे आयु-शरीर।
सगो न कोऊ पुत्री-मात, पुत्र-कलित्र मित्र अरु तात ॥

(६६४)

सगो न कोई किसी को होय, स्वारथ प्रीति करें सब कोय।
भये अनन्त चक्रि भूपाल, किन्तु तिन्हें भी खायो काल ॥

(६६५)

जानत जग को अस्थिर रूप, दीप हाथ रख कूदत कूप।
सीख सुनौं लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ॥

अशरण-भावना

(६६६)

आयु क्षीण होवै तब काल, ग्रसै जीव को रे भूपाल।
इन्द्र नाग जो रक्षक होंय, तो भी यम के मुंह में सोंय ॥

(६६७)

जैसे कर्म उदय में आयँ, तैसे तहाँ बाँध ले जायँ।
जीव बहुत जो लालच करै, कर्म बाँध फिर दोनो फिरै ॥

(६६८)

जब आबे यम को पैगाम, मंत्र-तंत्र नहिं आबे काम।
दलबल देई देव अपार, नहीं जीव को राखन हार ॥

(६६९)

हिरण एक जंगल में बसै, भय विपत्ति देखे दश दिशै।
सिंह तासु पै जब चढ़ि आय, तब निरीह को कौन बचाय ? ॥

(७००)

है नहिं कोई शरण संसार, ब्रह्मा विष्णू या त्रिपुरार।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय॥

संसार-भावना

(७०१)

पंच परावर्तन जग राव, द्रव्य-क्षेत्र-भव-काल अरु भाव।
भ्रमैं निरन्तर इनमें जीव, भुगतै विधि फल दुःख अतीव॥

(७०२)

भ्रमण चतुर्गति में बहु करै, कबहूँ स्वर्ग नरक संचरै।
नर तिर्यञ्च धरी पर्याय, किन्तु न जग को पार लहाय॥

(७०३)

माता भर घर गृहणी होय, गृहणी मर पुनि पुत्री होय।
पिता मरे सुत होय अनूप, यों जानो संसार स्वरूप॥

(७०४)

एकेन्द्रिय तन इतर निगोद, पर्‍यो वनस्पति माहि अबोध।
एक श्वाँस में अठ दश वार, जन्म्यो मर्‍यो सहो दुख भार॥

(७०५)

सम्यक्ता जब तक नहिं पाय, लख चौरासी यौनि भ्रमाय।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय॥

एकत्व-भावना

(७०६)

जीव गयो जिस जिस गति माँहि, रह्यो अकेलो दूजो नाँहि।
एकाकी सुख-दुख भुगतंत, एकाकी नव जन्म धरंत ।।

(७०७)

एकाकी मरघट में जाय, एकाकी संसार भ्रमाय।
एकाकी ही बाँधे कर्म, एकाकी ही साधै धर्म ।।

(७०८)

ठाठ बाट आडम्बर युक्त, बना हुआ क्यों अरे विमुक्त।
लाया नहिं कुछ वैभव साथ, खुले जायँगे दोनो हाथ ।।

(७०९)

तात-मात-सुत-भ्राता सगा, अन्त काल दे जाँहि दगा।
आतम तेरो शास्वत एक, तिसको भज धर परम विवेक ।।

(७१०)

सोच सदा अपनो एकत्व, तेरो केवल आतम तत्त्व।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ।।

अन्यत्व-भावना

(७११)

धन-कन-कंचन-दासी दास, जिन पर तू करता विश्वास।
ये तो भिन्न दिखें प्रत्यक्ष, इन पर क्यों तू करता लक्ष ।।

(७१२)

एक क्षेत्र अवगाही देह, तुझ से अलग सर्वथा येह।
इस पर भी मत कर विश्वास, इसको निश्चित होय विनाश ।।

(७१३)

मन-वाणी भी तुझ से दूर, तू ज्ञानानन्दी भरपूर ।
राग द्वेष मोहादि विभाव, पृथक सभी से आतम स्वभाव ॥

(७१४)

द्रव्य-भाव-तो तीनों कर्म, सब से भिन्न आतमा धर्म ।
एक समय वर्ती पर्याय, यह भी तुझ से भिन्न लहाय ॥

(७१५)

समझ भावना तू अन्यत्व, सदा विचारहु आतम तत्त्व ।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ॥

अशुचि-भावना

(७१६)

शृंगारित यह तेरी देह, घोर घृणायुत निस्सन्देह ।
वात-पित्त-कफ-विष्टा मूत्र, रुधिर-मांस-मज्जा-नस सूत्र ॥

(७१७)

अन्न पान-फल फूल सुगन्ध, तन संगति पा हों दुर्गन्ध ।
मल मल गंगाजल सों धोय, तो भी निर्मल काय न होय ॥

(७१८)

चंदन-केशर-अगर-कपूर, इत्र फुलेल लगावहु भूर ।
रहे अपावन अशुचि शरीर, जिमि ऋतुमति को लघु वह चीर ॥

(७१९)

ऊपर चर्म चमक शृंगार, भीतर रस बीभत्स अपार ।
अस काया पै कैसो गर्व, सौ सौ छेदे सौ सौ पर्व ॥

(७२०)

मृण्मय घट में चिन्मय जीव, विष-रस तज अमृत-रस पीव।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ॥

आस्रव-भावना

(७२१)

आस्रव अनुप्रेक्षा का भाव, सीख सिखावै तुमको नाव।
स्वयं तरै पर तारन हार, बेड़ापार लगावन हार ॥

(७२२)

जो कहुं छेद नाव में होय, ले डूबे यात्री गण सोय।
जीवन-नौका में जो छेद, समझ दशानन पांचों भेद ॥

(७२३)

मिथ्यातम अवरति काषाय, योग प्रमाद जिनागम गाय।
भावास्रव द्रव्यास्रव रूप, कर्म स्रोत दोनों भव-कूप ।

(७२४)

धरै शुभाशुभ जब तक भाव, तब तक डूबै जीवन-नाव।
आस्रव छिद्र करै जब बंद, नये कर्मनि को तब नहिं बंध ॥

(७२५)

तुम हो परनारी हरतार, रावण पापास्रव करतार ।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ॥

संवर-भावना

(७२६)

अंग समेट कवच में धरै, कूर्म आतम रक्षा ज्यों करै ।
त्यों मन-वच-काया करि गुप्त, जागें मुनि नहिं होंय सुषुप्त ।।

(७२७)

समिति-शीलव्रत, धर्म प्रतीत, अनुप्रेक्षा भा परिषह जीत ।
संवृत करते विषय कषाय, छोड़ शुभाशुभ शुद्ध ध्याय ।।

(७२८)

ज्यों सछिद्र नौका मझधार, डूबै और डुबावन हार ।
डाँट लगाय छिद्र कर बंद, नव कर्मों का हो क्यों बंध ? ।।

(७२९)

संवर आस्रव की है रोक, सत्तावन भावों का थोक ।
संवर ही है आतम-धर्म, संवर से रुकते हैं कर्म ।।

(७३०)

करहु संवरण हे लंकेश, सिय प्रति राग राम प्रति द्वेष ।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देह पठाय ।।

निर्जरा-भावना

(७३१)

पूर्व बद्ध झड़ जावें कर्म, धरहु निर्जरा रूपी धर्म ।
होय निर्जरा तप के द्वार, तप है इच्छा को परिहार ।।

(७३२)

एक निर्जरा है सविपाक, दूजी है उत्तम अविपाक।
पहली तो सब ही कें होय, फल दे कें कर्मन को खोय ॥

(७३३)

दूजी में है अति पुरुषार्थ, सिद्धि इसी से हो सर्वार्थ।
पूर्व बद्ध कर्मों का नीर, भरौ नाव में नाव गहीर ॥

(७३४)

तप करके जल देहु सुखाय, निर्जर यह अविपाक कहाय।
बारह तप जो कहे जिनेश, तिनको तपें दिगम्बर भेष ॥

(७३५)

अपनी ओर निहारो जरा, ताकि कर्म की हो निर्जरा।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ॥

लोक-भावना

(७३६)

छह द्रव्यों का ही समुदाय, जहाँ दिखें सो लोक कहाय।
उर्ध्व मध्य एवं पाताल, चौदह राजू तुंग विशाल ॥

(७३७)

लोक पुरुष ज्यों शोर्ष विहीन, खड़ो कमर पै द्वय कर दीन।
नहिं ब्रह्मा हैं सिरजन हार, विष्णू भी नहिं पालन हार ॥

(७३८)

नहिं महेश करते संहार, है अनादि से यह संसार।
इसका कोई न करता है, इसका कोई न धरता है ॥

(७३९)

यह अनंत तक रहना है, यह जिनवर का कहना है।
अब तू अपने को अवलोक, तुझ में बसते तीनों लोक ।।

(७४०)

स्वर्ग-नर्क एवं संसार, तुझ में रहैं कर्म अनुसार।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ।।

बोधि-दुर्लभ-भावना

(७४१)

जगत जीव का मूल निवास, है निगोद ही अब तक खास।
दुर्लभता से होय निकास, स्थावर में करै विकास ।।

(७४२)

स्थावर से त्रस पर्याय, दुर्लभता पूर्वक ही पाय।
त्रस से निकल जु मानुष होय, भाग्यवान ही समझो सोय ।।

(७४३)

मानवता दुर्लभतम कही, इन्द्र तरसते जिसको सही।
उसमें भी दुर्लभ सत्संग, जहाँ न कोई निम्न प्रसग ।।

(७४४)

सत्संगति भी सुलभ कहाय, श्रावकपन दुर्लभ ठहराय।
श्रावक यदि सम्यक्त्वी होय, भव्य जीव तब समझौ सोय ।।

(७४५)

दुर्लभ श्रावक व्रती महान, मुनि उनसे भी दुर्लभ जान।
दुर्लभतम जिन बोधि लहाय, सिया राम को देहु पठाय ।।

धर्म-भावना

(७४६)

'दंसण मूलो धम्मो' मान, 'वत्थु स्वभावो धम्मो' जान।
मात्र अहिंसा परमो धर्म, धर्म वही जो काटै कर्म ॥

(७४७)

संसारी दुख तें उद्धार, करि पहुंचावै शिव के द्वार।
वही धर्म रत्नत्रय रूप, षड् दर्शन में प्रमुख अनूप ॥

(७४८)

तीन भुवन में सार महान, केवल वीतराग विज्ञान।
दिव्यध्वनि में जो उपदेश, निःसृत करते हैं तीर्थेश ॥

(७४९)

स्याद्वाद-निश्चय-व्यवहार, सप्त तत्त्व का जहँ विस्तार।
जैन धर्म की करो प्रतीत, छोड़ो तुम मिथ्यात्व गृहीत ॥

(७५०)

भावनाएँ ये बारह भाव, निरखो अपनो आत्म-स्वभाव।
सीख सुनो लंकापति राय, सिया राम को देहु पठाय ॥

लंका–दहन

(७५१)

सुन कर कपिध्वज को उपदेश, भयो प्रकोपित अति लंकेश।
दियो बधिक को यों आदेश, अस मारहु असु रहैं न शेष ॥

(७५२)

कियो बधिक ने तद् अनुसार, वृथा हुए सब वज्र-प्रहार।
बोले कपिध्वज सुन हे नीच, ऐसें नहीं हमारी मीच ॥

(७५३)

बतलाता हूँ एक उपाय, जिस विधि मृत्यु हमारी आय।
ल्याओ बहुत रुई को गुच्छ, रचो एक लंबी सी पुच्छ ॥

(७५४)

तिसमें डारहु घृत अरु तेल, तिसको मम लंगोटे मेल।
सुनकर युक्ति प्रफुल्लित होय, दशकंधर ने कीनो सोय ॥

(७५५)

कपिध्वज गयो तहाँ से भाग, लगा पुच्छ में अपनी आग।
चढ़ बैठ्यो गढ़ लंका जाय, ठौर ठौर जा आग लगाय ॥

(७५६)

महल-कोट तरु आदि प्रभूत, किये सभी हनु भस्मीभूत।
त्राहि त्राहि की मची पुकार, क्षण में लंका कीनी क्षार ॥

(७५७)

भवन एक नहीं ठाँड़ो रह्यो, श्मसान लंका गढ़ भयो।
फलीभूत कपि को परिहास, भयो लंक को सत्यानाश ॥

बीती–बातें

(७५८)

बैठ विमान उड़यो आकाश, तत् छिन गयो राम के पास।
लौटत देख्यो अंजनि बाल, लक्ष्मण राम और भूपाल ॥

(७५९)

गाजे बाजे से अगवान, स्वागत कियो सभी हनुमान।
भेट्यों निज निज कंठ लगाय, सिंहासन दीनों पधराय ॥

(७६०)

हो सुचित्त रघु पूछें बात, कहो जानकी की कुशलात।
बोले कपिध्वज जोड़े हाथ, समाचार सुनिये रघुनाथ ॥

(७६१)

सप्त समुन्दर कीने पार, 'लंका सुन्दरि' परणी नार।
गयो विभीषण गृह पश्चात्, जिसने कही भेद की बात ॥

(७६२)

चल्यो तहाँ तें धरि अभिलाष, पहुंच्यो सीता के आवास।
दई मुद्रिका लीनी मात, पूंछी तब द्वय की कुशलात ॥

(७६३)

सो वियोग की सारी कथा, कही सिया सों क्रमशः यथा।
सीता ले बैठीं सन्यास, राम बिना नहिं लेवें ग्रास ॥

(७६४)

मैंने कुशल संदेशो कह्यो, बारहवें दिन भोजन लह्यो।
मंदोदरि सीता के पास, बैठी थी सो दई निकास ॥

(७६५)

निकट दशानन पहुँची जाय, बोली वन नर-वानर आय।
किंकर तब कई दये पठाय, लौटे सब ही मुंह की खाय॥

(७६६)

पुनि मैं बन्दी गयो बनाय, इन्द्रजीत रावण ढ़िग ल्याय।
सूझी एक युक्ति चालाक, क्यों न करूं लंकागढ़ खाक ?॥

(७६७)

करि लंका को भस्मीभूत, आयो मैं रघुवर को दूत।
सुनि वज्रांगबली की बात, हुए राम तब पुलकित गात॥

राम-रावण युद्ध

(७६८)

बोले अंगद नल अरु नील, हे सुग्रीव करहु मत ढील।
सब मिल करहु आक्रमण घोर, हो जिससे लंका को भोर॥

(७६९)

सजी सैन्य सुग्रीव तुरन्त, जाकी गिनती को नहिं अन्त।
बढ़ी फौज ले प्रबल प्रभाव, कियो सिन्धु के पास पड़ाव॥

(७७०)

दूत हाथ भेजयो संदेश, करो सिया वापिस लंकेश।
रामचन्द्र के चरणन परो, अथवा बिना मौत ही मरो॥

(७७१)

दूत वचन सुनि कर लंकेश, भयो जेठ को सूर्य विशेष।
बाल्यो 'राम-लखन' बलवीर, भले पधारे भरिवे नीर ॥

(७७२)

यों कहि दूत हनन के अर्थ, उठ्यो दशानन शक्ति समर्थ।
मंत्री ने तब कियौ सचेत, दूत कदापि न मारन हेत ॥

(७७३)

सुन कर स्तंभित लंकेश, कह्यो दूत सों यों संदेश।
राम-लखन पशु-पक्षि समान, जिनके पंख पूंछ नहिं कान ॥

(७७४)

घास फूस वनवासी चरें, नर से विद्याधर क्यों डरें ?।
रावण को उत्तर सुन दूत, गयो जहाँ दशरथ के पूत ॥

(७७५)

ज्यों की त्यों कह दोनो बात, सुनी ध्यान से सब रघुनाथ।
बात विभीषण ने भी सुनो, स्वयं सैन्य लायो दस गुनी ॥

(७७६)

लंका को बतलायो भेद, मानो भयो नाव में छेद।
कुंभकर्ण ले रावण पक्ष, आयो सेना ले प्रत्यक्ष ॥

(७७७)

कुंभकर्ण एवं हनुमंत, भिड़े परस्पर द्वय बलवन्त।
भयो युद्ध कई दिन पर्यन्त, कुंभकर्ण को कीनो अन्त ॥

(७७८)

सुन कर मरण दशानन क्रुद्ध, आयो करने खुद ही युद्ध ।
जुटे दोई दल रावण-राम, भयो भयानक रण संग्राम ॥

(७७९)

उठी रेणु नभ में गई छाय, सूर्य-किरण भी नहीं दिखाय ।
बही रक्त नदियों की धार, हुए हताहत सुभट अपार ॥

(७८०)

छोड्यो प्रतिनारायण चक्र, नारायण ने झेल्यो चक्र ।
पुनि लक्ष्मण ने कीनो वार, चक्र कियो रावण संहार ॥

(७८१)

बज्यो जीत को डंका खूब, लुटी स्वर्ण की लंका खूब ।
लंका राज्य विभीषण दीन, भई जानकी पुनि स्वाधीन ॥

अयोध्या-गमन

(७८२)

राम लक्ष्मण सीता लेय, पहुँचे निज नगरी स्वयमेव ।
मित्र पक्ष को करी विदाई, वे भी निज गृह पहुंचे जाई ॥

विरक्ति

(७८३)

सैना सेवक द्रव्य अपार, सज्जन मित्र बृहत परिवार।
इन्द्र तुल्य वैभव भरपूर, मिल्यौ हनू को कुंडल पूर ॥

(७८४)

तहाँ राज्य कीनो बहुकाल, न्याय नीति युत जनता पाल।
एक दिवस हनु बैठि विमान, गये मेरु पै जिनवर थान ॥

(७८५)

देव-शास्त्र-गुरु पूजा कीन, धर्म चिन्तवन में चित दीन।
रहे जिनालय सारी रात, देख्यो एक विमान निपात ॥

(७८६)

उपजी मन में घोर विरक्ति, रही न विषयों से आसक्ति।
यह शरीर-यह धन-यह धाम, सभी विनश्वर आठों याम ॥

(७८७)

त्रिया सम्पदा और कुटुम्ब, विष-रस भरे कनक के कुंभ।
ज्यों अंजुलि जल टप टप गिरै, भाव-मरण नर छिन २ करै ॥

(७८८)

जब तक आतम ध्यान् नहि करै, तब तक लख चौरासी फिरै।
मोह वशात् कर्म को पाँति, बाँधै यह नर नाना भाँति ॥

(७८९)

सर्व श्रेष्ठ है पद-निर्ग्रन्थ, दूजो नहीं मुक्ति को पंथ।
मन में छायो घोर विराग, त्रिया-धाम-धन दीनै त्याग ॥

बिदाई (अनुज्ञा)

(७६०)

राज्य-सभा के मध्य पधार, प्रकट किये अपने उद्‌गार।
मंत्री बोले सुनिये देव, किस विधि धरियो संयम एव ।।

(७६१)

विद्यमान यह सब ऐश्वर्य, कहाँ स्वर्ग में वे नृपवर्य।
स्वर्ग अप्सराओं सों रूप, धारें तुम घर त्रिया अनूप ।।

(७६२)

सकल पदारथ तुम गृह माँहि, सर्वोत्तम विद्याधर माँहि।
यहीं अहिंसा व्रत शुभ पाल, गृहस्थ धर्म धारी भूपाल ।।

(७६३)

बोले हनु सुन मंत्री बात, जग की अस्थिरता विख्यात।
हाथ पकड़ जब खीचें काल, को रक्षक को दीन दयाल ? ।।

(७६४)

सेवक सैनिक रथ गज साज, बुला पुत्र को दीनों राज।
तोड़ मोह ममता की फाँस, गये स्वयं मुनिवर के पास ।।

महाश्रमण—हनुमान

(७९५)

सात शतक नृप अधिक पचास, हनुमत संग लियो संन्यास।
धार्यो नग्न दिगम्बर भेष, करहिं तपस्या सह तन क्लेश ॥

(७९६)

रानी थीं जितनी रनवास, ते सब गईं आर्यिका पास।
तज गृह मोह दीक्षा लीन, क्रमशः हुई सब स्वर्गासीन ॥

(७९७)

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित्र, पालें मुनि हनुमान पवित्र।
बारह तप आराधन चार, पंच महाव्रत समिति विचार ॥

(७९८)

दशों धर्म, परिषह बाईस, यथाख्यात सब धरहिं मुनीश।
ग्यारह अंग चौदहों पूर्व, पढ़ कर ज्ञानी बने अपूर्व ॥

(७९९)

धर्म ध्यान मय शुभ उपयोग, धारें हनूमान करि योग।
सप्तम गुण थानक के भाव, शुक्ल ध्यान अरु शुद्ध स्वभाव ॥

(८००)

धारैं मुनिवर शुध उपयोग, तन-चेतन को करें वियोग।
क्षपक श्रेणि मांडी हनुमान, पहुंचे बारहवें गुण थान ॥

(८०१)

तेरहवें में हो अरिहंत, बनें केवली जिन हनुमन्त।
शेष अघाती कर्म नशाय, चौदहवां गुण थानक पाय॥

मुक्तिदूत

(८०२)

भये मुक्त जग से हनुमंत, पहुँचे लोक शिखर के अन्त।
भोगें सौख्य अनंतानंत, जय हनुमंत-सिद्ध-भगवंत॥

कवि की धारणा

(८०३)

जो यह कथा सुनै धरि ध्यान, काल लब्धि पावै निर्वान।
कामदेव सम सुंदर रूप, पावें अतिशय अतुल अनूप॥

(८०४)

पुण्य पुरुष पौराणिक धन्य, चरम शरीरी वीर अनन्य।
उनको वानर रूप बनाय, तेल और सिन्दूर लगाय॥

(८०५)

पूजें उनको मान कुदेव, मिथ्यामत की करें कुसेव।
सो जन भव भव मुक्ति न पाय, भेद ज्ञान की युक्ति न पाय॥

(८०६)

है वजरंग वली हनुमान, पर मेरो है यह अनुमान।
हैं "वज्रांगवली" बलवीर, पवनञ्जय सुत गुण गंभीर ॥

(८०७)

वीतराग मुद्रा संयुक्त, ज्ञान शरीरी और विमुक्त।
मान इन्हें जो पूज्य करेय, धर्म धरै बहु पुण्य भरेय ॥

(८०८)

जय जय वीतराग भगवान, जय जय अंजनि सुत बलवान।
जय जय वायु पुत्र हनुमंत, जय अरिहंत सिद्ध भगवंत ॥

परिचय

(८०९)

मूल संघ भव तारण हार, गच्छ शारदा गुरु आचार।
रत्नकीर्ति मुनि अधिक सुजान, तासु पाद मुनि गुणहि निधान ॥

(८१०)

है अनंत कीर्ति शुभ नाम, कीर्ति अनंत प्राप्त अभिराम।
वे मुनि ज्ञान गुणों के सिन्धु, उनकी स्तुति केवल बिन्दु ॥

(८११)

तासु शिष्य जिनवर लवलीन, 'ब्रह्मराय' अति प्रतिभा हीन।
हनु गाथा को कियो प्रकाश, क्रियावंत मुनि को ह्वै दास ॥

(८१२)

करी कथा मन में धरि हर्ष, सोलह सौ सोलह शुभ वर्ष।
ग्रीषम ऋतु महिना बैसाख, नवमी तिथि अंधियारो पाख॥

(८१३)

करियौ मत मेरो उपहास, विज्ञजनों का हूँ मैं दास।
अक्षर मात्राओं की भूल, हाथ जोड़ मैं करूँ कबूल॥

(८१४)

बार बार यों करूँ पुकार, जग में जीव दया व्रत सार।
जो नर धर्म अहिंसा पाल, स्वस्थ रहै वह जगत त्रिकाल॥

(८१५)

वीतराग मुझको वर देहु, मिथ्यामत मेरो हर लेहु।
कुगुरु कुदेव कुशास्त्र अमान्य, सुगुरु सुदेव शास्त्र सम्मान्य॥

(८१६)

हे स्वामिन् मुनिसुव्रत नाथ, मंगल मय हो आत्म-प्रभात।
कुमति हरौ सन्मति भर देहु, मुझ गृहस्थ को यति कर देहु॥

(८१७)

हस्त लिखित प्रति पाई एक, हुआ हर्ष अति तिसको देख।
लिपिकारों की लीला मित्र ! होती सचमुच बड़ी विचित्र॥

(८१८)

यत्र-तत्र ज्यों लिखा जहाँ, यंत्र-तंत्र लिख जायँ तहाँ।
पुत्र-पिता की मात्रा तोड़, पत्र-पता लिख जायें करोड़॥

(८१६)

सूरत को 'हनुमान-चरित्र', मिल्यो भेंट में हमको मित्र।
मुद्रा राक्षसों की कृपा, भगवन् जाने क्या क्या छपा ।।

(८२०)

हस्त लिखित प्रति मूल पुराण, सन्मुख रखकर पद्म-पुराण।
कियौ शुद्ध संशोधन खूब, चारों अनुयोगों में डूब ।।

(८२१)

कुछ मौलिक कुछ प्रति आधार, लेकर कियौ चरित तैयार।
मन गढंत नहिं कीनी कथा, लिखी पुराणन भाषी यथा ।।

दोहा

(८२२)

कुमुद और पुष्पेन्दु ने, संशोधित कर ग्रन्थ।
पाठक गण को सौंपियत, जयतु मोक्ष का पंथ ।।

(८२३)

पंडित जन जब क्षम्य हैं, तो फिर हम अल्पज्ञ।
बहुत क्षमा के पात्र हैं, हम कवि युगल कृतज्ञ ।।

कथा-वस्तु

चरम शरीरी चरित-नायक "श्री शैल हनुमान जी" का पावन जीवन-दर्शन स्वतंत्र रूप से इस चरित काव्य में निबद्ध है। इस कल्पकाल में यदि परम लोक प्रियता के पद पर प्रतिष्ठित कोई कथा रही है तो वह है "श्री राम-कथा"।

रामायण अथवा पद्मपुराण वस्तुत: सम्प्रदायातीत ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों में संदर्भित प्राय: सभी छोटे बड़े पात्र श्रीराम को केन्द्र-बिन्दु मानकर भी अपनी स्वतंत्र मौलिक व्यक्तिमत्ता रखते हुए २०वें तीर्थंकर श्री मुनि सुव्रतनाथ जी के प्रशासन की ही प्रभावना करते हैं। उदात्त आदर्शों वाले पात्रों की इतनी अधिक भरमार इन ग्रन्थों में रही है कि प्रत्येक ही अपनी गौणता की पर्याय छोड़कर मुख्य नायकत्व की भूमिका पर उतरता हुआ दिखाई देता है।

वज्राङ्गवली हनुमान जी भी एक ऐसे ही अलौकिक आदर्श पात्र हैं जो सामान्यत: "राम-दूत" होकर भी हमारे लिये "मुक्तिदूत" के रूप में परम पूज्य बन गये हैं। चूंकि त्रेसठ शलाका के अतिरिक्त पुण्य-पुरुषों में उनका नाम प्रात: स्मरणीय है, अत: उनके नायकत्व में जितने भी स्वतन्त्र ग्रन्थों का प्रणयन हो थोड़ा है। प्रस्तुत काव्य ग्रन्थ भी कवि श्री "ब्रह्मराय" जी का इसी दिशा में एक लघु प्रयास है।

श्री शैल हनुमान जी के पूर्व भव—गर्भ, जन्म आदि के सुप्रसंग जितने अधिक रोचक और रोमांचक तथा चमत्कारिक

हैं उतने ही पौरुषोचित वीरता के कार्यकलाप उनके शैशव तारुण्यादि अवस्थाओं में भी सुघटित हुए हैं। धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का एक ही समय समवाय (समुदाय) यदि किसी आत्मा की देह में देखने को मिलता है तो वह है—"वज्राङ्गवली श्री हनुमान जी।"……न्याय-नीति और धर्म रक्षा के लिये वे स्वजनों स्वसम्बन्धियों के भी विरोध में अग्रदूत बनते हैं। उनका वैराग्य प्रकरण तो इस पुस्तिका का प्राण ही है। कैवल्य प्राप्ति में तो समग्र वाङ्मय ही समाया हुआ है।

× × ×

नगराज हिमालय के उत्तुंग शिखर पर अवस्थित अष्टापद कैलाश की निर्वाण भूमि का सुखद रम्य वातावरण ! पार्श्व भाग में लहराती-बल खाती हुई अगाध निर्मल नील जल-राशि वाली मान सरोवर झील ! नील, रक्त और श्वेत कमल कुमुदनियों सहित वहाँ मुकलित हो रहे हैं और नीर क्षीर विवेकी राजहंस मुक्ता चुगते हुए उनसे अनासक्ति की साधना सीख रहे हैं।

कार्तिकीय आष्टाह्लिका महोत्सव में वंदनार्थ पधारे हुए नर-विद्याधरों का जन समुदाय धर्माराधन की क्रिया से निवृत हो अब गृहस्थ कर्म के समारम्भ में निमग्न हैं और यहाँ मेले के शिविर में ये जो तंबू पास-पास तने हुए हैं जरा उनके अधिपतियों का वार्तालाप तो सुनिये……।

"……परन्तु सुकन्या का शुभ नाम क्या है?"

"अंजना।"

"क्या उसे भी साथ में लाये हैं—यहां महोत्सव में।"

"जी नहीं, निर्ग्रन्थ उपाध्याय मुनि के पादमूल में शास्त्राभ्यास जो कर रही है।"

"उसकी मां तो पधारी ही होंगी?"

"हाँ, कन्या की माँ महारानी हृदयवेगा यहीं हैं, सम्प्रति झील पर सहेलियों सहित जल-क्रीड़ा हेतु गई हैं। आती ही होंगी।"

"......तो शाह महेन्द्रराय जी आपकी सुपुत्री के साथ मेरे पुत्र पवनकुमार का संबंध मेरी ओर से तो सुनिश्चित है; अब आप अपना निश्चय प्रकट कीजिये। कुमार की माता केतुमती भी इस सुखद संबंध से परम संतुष्ट हैं।"

"परम आदरणीय शाह श्री प्रहलादराय जी ! सर्वाङ्ग सुन्दर-सुशील एवं शूरवीर किशोर पवनञ्जय जैसे श्रेष्ठ वर को पाकर मुझे अब अन्य किसी भी वर प्राप्ति की आकांक्षा नहीं। मैं कुमार पर पूर्णतया मुग्ध हूँ—अनुरक्त हूँ। मेरी ओर से भी यह संयोग संबंध सुनिश्चित रहा।"

उपरोक्त वार्तालाप का शुभारम्भ तो दो अपरिचित व्यक्तियों से हुआ किन्तु समापन आत्मीयता के जिस मधुमय वातावरण में निष्पन्न हुआ वह परिचय की कृत्रिम सीमा लाँघ कर समधी युगल की स्निग्ध भूमिका पर स्थित होकर एकमेक हो गया। ये दो समधी हैं महेन्द्रपुर के राजा महेन्द्रराय एवं आदित्यपुर के नृपति प्रहलादराय !

अन्ततः कुमारी अंजना एवं कुमार पवन का सुखद वाग्दान स्वरूप प्रणय संबंध युगल पक्षों के माता-पिता, सामन्त, सचिव आदि की उपस्थिति में सुनिश्चित होगया। भले ही नायक नायिका की अनुपस्थिति इस सुखद सुखांत दृश्य में बनी रही हो !

× × ×

पवन-प्रिय मित्र प्रहस्त ! राजकुमारी अंजना रूप-गुण और प्रतिभा की साक्षात प्रतिमा है। किन्तु उसकी प्रशस्ति के आख्यान अब श्रुति के माध्यम से नहीं बल्कि साक्षात् दर्शन

के माध्यम से ही प्राप्त करने को लालायित हो रहा हूँ। परोक्षता को प्रत्यक्षता में प्रत्यावर्तित कर उसके सत्यं शिवं सौन्दर्यम् से तृप्त होने को अधीर हो रहा हूँ। अतः कोई ऐसा उपाय बताओ जिससे माता-पिता की अनभिज्ञता में प्रच्छन्न रूपेण हमारा मिलाप भावी प्रिया से क्षणमात्र को भी हो सके।

प्रहस्त—पवन ! इतने अधिक आतुर मत होओ, तुम्हारे पूज्य माता-पिता ने तुम्हें ऐसी अपूर्व चिन्तामणि प्रदान करदी है जो त्रैलोक्य में भी दुर्लभ है-अलभ्य है। तथापि हम तुम्हें इस विमान पर बैठा कर गुप्त रूपेण एकान्त मार्ग से अभी हाल तुम्हारे श्वसुरालय महेन्द्रपुर लिये चलते हैं।

× × ×

ग्रीष्म ऋतु का सायँकाल ! महेन्द्रपुर की सतखंडी अट्टालिका की विस्तृत खुली छत ! किलकती विहँसती नव यौवना सहेलियों से घिरी हुई और अपने मधुर स्वप्नों में खोई हुई एक सलज्ज-रक्ताभ कुमारी नायिका उनके आकर्षण का केन्द्र बिन्दु बनकर उसी तरह निरुत्तर बैठी है, जैसे रंग-बिरंगी तितलियों से घिरी हुई कमल-कर्णिका।······और वहीं उसी छत के दूसरे कोने में से दो युगल किशोर अदृश्य रूप से निरंजन खड़े हुये हैं। उन विद्याधर कुमारों की विद्या का ही यह चमत्कार है कि वे किसी को भी दिखाई नहीं देते, सुनाई देते !!

सहेलियों के अट्टहास, व्यंग्य, कटाक्ष तथा प्रशस्तियों से भरे श्रृङ्गार-रस मय वातावरण से ओत प्रोत कौमार्य जीवन सर्वत्र रंगीनियां बिखेर रहा है।······किन्तु अंजना केवल मंद मंद मुस्कानों द्वारा ही सम्पूर्ण मुखरता पर विजय प्राप्त करती जा रही है। इतने में क्या होता है, कि एक सखी रस में विष घोलती हुई एक निर्मम तीक्ष्ण व्यंग-बाण छोड़ती है······ !

"कहाँ के सुन्दर वर ढूंढ़े हैं इनके पिताश्री ने ? इनसे अच्छे तो……!"

बस फिर क्या था ? रंग में भंग हो गया—अमृत में विष घुल गया ।……और अधूरी आघात युक्त बात सुनकर ही भावावेश में वे दोनों मित्र तत्क्षण ही उल्टे पैरों आदित्यपुर वापिस हो जाते हैं । रास्ते भर पवन का अन्तर्द्वन्द चलता रहता है ……।

आखिर उस दुष्टा अंजना ने मेरी निंदा सुनकर भी उसका कोई प्रतीकार क्यों नहीं किया ? प्रत्युत्तर क्यों नहीं दिया ? क्या वह भी उस ढीट-दुष्टा दासी की बातों से सहमत थी ? ………इसका दण्ड तो उसे मिलना ही चाहिये । पवनकुमार ! अब यह शादी न होगी और विवशता में हुई भी तो……… चिर वियोग……चिर परित्याग……!

दम्पत्ति अब एक तो घर में रहेंगे ही नहीं यदि रहे भी तो ३६ के अंक बन कर ।

………विवाह तो होना था, सो हो ही गया । किन्तु क्षण भर का वह संयोग एक दो नही प्रत्युत पूरे २२ वर्षीय चिर वियोग के रूप में परिणत हो गया ।

अंजना की इस चिर विरह व्यथा की अनुभूति उस कली से पूछिये जो खिलने के पहिले ही पददलित कर दी गई हो । एक ही घर में दोनों दम्पत्ति हैं किन्तु आश्चर्य ! अंजना पर पवन का दृष्टि निक्षेप भी नहीं, संलाप तो रहा कोसों दूर...।

लंकाधिपति रावण के दूत ने एक सन्देश लाकर पवन को दिया । उसमें लिखा था............

राजा वरुण ने हमसे शत्रुता मोल ली है अत: युद्ध अनिवार्य है और इस युद्ध में विजय केवल आप के ही साहाय्य पर निर्भर

है। हमारी आपकी चिर मैत्री अमर रहे। इति शुभं।

पत्र पढ़ते ही पवन सैनिक वेष धारण कर रण-भूमि के प्रस्थान हेतु कटिवद्ध हुआ ही था कि मंगलमुखी अंजना आरती का जगमगाता थाल लेकर देहरी पर खड़ी हो जाती है। आव देखा न ताब, हाव देखा न भाव—अभिमानी पवन ने पादप्रहार करके उसकी समस्त शुभ कामनाओं को रौंद दिया और तीर की तरह ससैन्य वहां से चल दिया.........।

शिविर का पड़ाव हुआ पुनः उसी मान सरोवर तीर पर।

अर्द्ध रात्रि की नीरव वेला। सभी सैनिक अपने २ तंबुओं में निद्रादेवी की गोद में विश्रान्ति पा रहे हैं। शुभ्र ज्योत्स्ना की चांदी भूतल तल पर वर्षा कर चन्द्रमा खिलखिलाकर हँस रहा है। यहां की घोर नीरवता को भंग करने वाला यह कौन सा पक्षी इतनी रात गये निरन्तर चिल्लाता ही जा रहा है?

पवन और प्रहस्त की नींद खुल जाती है। दोनों किनारे पर जाकर देखते हैं एक चकवी चकवे के वियोग में आकुल-व्याकुल होकर घोर रुदन कर रही है। उपादान यदि जागृत हो तो निमित्त कहीं भी उपस्थित हो जाता है। बाईस वर्षीय चिर वियोग का अंत पक्षी के निमित्त से होना था। अतः पुनः पवन का अन्तर्द्वन्द चालू होता है—मचल उठता है, सोचता है.........। "जब तिर्यञ्च जलचरी भी एक रात्रि भर के पिया विछोह में इतनी तड़फ रही है तो उस मानवी देवी अंजना की क्या अवस्था होगी? जो निरन्तर २२ वर्ष से विरह की अग्नि में जलकर भस्मसात हो रही है? धिक्कार मुझे-मेरे तारुण्य को.........।" फल स्वरूप दूसरे ही क्षण प्रहस्त और पवन उसी द्रुतगामी विमान पर आरूढ़ हो अर्द्ध रात्रि के उसी सन्नाटे में उस छत पर प्रच्छन्न रूपेण पहुँचते हैं, जहाँ के शयन कक्ष में

अंजना भूमि शय्या पर लेटी हुई करवटों पर करवटें बदल रही है और उसकी सखी वसंतमाला उसकी परिचर्या में तल्लीन है !

"......खट..... खट......खट दरवाजे की खटखटाहट सुन कर युगल सखियां भयभीत हो जाती हैं।

इतनी रात गये किस पर पुरुष ने यहां आने का दुस्साहस किया ? वसंतमाला ने वातायन से झांका तो प्रहस्त और पवन को खड़े पाया। उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। दरवाजा खुल जाता है। पवन अंजना के कक्ष में और प्रहस्त तथा वसंत-माला अपने २ अतिथि कक्ष में पहुँच जाते हैं।

× × ×

"प्रिये ! अब मुझे बिदा दो, ताकि मैं यहां आने के अपने गुप्त रहस्य को छिपाये रख सकूं तथा समुचित समय पर ससैन्य रणभूमि में पहुँच कर अपने कर्त्तव्य का पालन कर सकं !"... पवन ने अंजना से कहा।

नाथ ! आपने मुझ अभागिनी पर महती कृपा की; मैं आ को सहर्ष बिदा करती हूँ......किन्तु मुझे ऐसा ज्ञात होता है कि मैं गर्भवती हो रही हूँ......हमारा आपका सुखद संगम चूंकि चिर-वियोग के अनन्तर प्रच्छन्न रूप से हुआ है, इसलिये भावी आशंकाओं और कलंकों से बचने के लिये आप अपनी यह रत्न-जटित स्वर्ण-मुद्रिका मुझे देते जाईये; जो सदैव हमारे आपके सुखद संयोग की प्रतीक बनकर प्रत्येक आक्षेप का उत्तर अपनी मौन भाषा में देती रहे।"......अंजना ने सकुचाते हुए अत्यन्त विनम्र शब्दों में पवन से निवेदन किया !

× × ×

बाल-सूर्य के उदय होने की अग्रिम सूचना लालिमा द्वारा मिलती है, वैसे ही अंजना भी दिन और मास बीतते-बीतते

गर्भगत चिन्हों को क्रमशः प्रकट करने लगी।

सासु केतुमती ने एक दृष्टि में ही सारी परिस्थिति भांप ली और अपनी भृकुटि बंक करके घ्राण को घृणा से सिकोड़ कर अपने दु:शासन का प्रयोग वाग्वाणों द्वारा करना प्रारंभ कर दिया।

निष्कलंकिनी ने सौ सौ सौगंधे खाकर स्वर्ण मुद्रिका की प्रामाणिक साक्षी देते हुए सासु को आश्वस्त करने के कोटि २ विफल प्रयास किये किन्तु वह काहे को मानने वाली थी।... दुष्टनी, कुलकलंकिनी, निर्लज्जा, पुंश्चली, पापिष्ठा आदि सासु सुलभ मर्मान्तिक अप शब्दों से विभूषित करके, धक्के देकर उसे राजगृह से निकाल दिया गया। श्वसुर, सामन्त, राज परिवार आदि किसी ने भी ऐसे समय उसे प्रश्रय देना हितकर न समझा!

श्वसुरालय से निष्कासिता अंजना अपने शैशवावस्था का स्मरण कर मां की ममता और पिता का निश्चल निश्छल प्यार पाने अपनी सहचरी वसंतमाला को लेकर महेन्द्रपुर पहुँचती है।

परन्तु वहाँ पर भी उसकी आशाओं पर तुषारापात होता है। स्वयमेव आगता अंजनी वहाँ भी अविश्वसनीय घोषित होती है। फलस्वरूप वहाँ से भी तिरस्कृत होकर वे दोनों सखियें रोती-कलपती-विलखती विसूरती हुईं निराश्रित होकर जंगल की राह लेती हैं।

जंगली जानवरों से आकीर्ण वन, अंधेरी डरावनी रातें, सरित गिरि गव्हर खाई आदि के सैकड़ों व्यवधान......तथापि पंच परमेष्ठी के स्मरण पूर्वक दोनों चली जा रही हैं—बढ़ती ही जा रही हैं!......

शारीरिक और मानसिक व्यथाओं की पराकाष्ठा। भय

और आतंक से भरा वायु मंडल !

निदान एक अंधेरी गुफा को आश्रय स्थल समझ कर वे दोनोंवहीं ठहर जाती हैं। समीप ही चारण ऋद्धिधारी मुनिराज ध्यानमग्न अवस्था में दृष्टिगत होते हैं। घटाटोप विपदाओं का अन्त करने वाले मानो सौभाग्य सूर्य के ही दर्शन हुए ! भक्ति भाव पूर्वक वंदना करके शान्तचित्त से उनके पादमूल में बैठ जाती हैं !

अंजना के पूर्व भव कृत पाप कर्म की दृश्यावली दिखाते हुए महामहिम मुनिराज उन्हें तत्त्वोपदेश देते हैं और आश्वस्त करते हैं कि हे बालिके ! तुम चिन्ता मत करो। शीघ्र ही तुम्हारे दुःखों का अंत होने वाला है; क्योंकि तुम्हारी पावन कुक्षि से जिस दैदीप्यमान तेजस्वी पुत्र-रत्न का प्रादुर्भाव होने वाला है वह चरम शरीरी मोक्षगामी जीव वज्राङ्गबली हनुमान है। उनकी प्रखर पुण्य रश्मियों से तेरे पाप तिमिर का शीघ्र ही विध्वंस होगा !

बाईस वर्षीय चिर वियोग एवं मिथ्या कलंक के कारणों के रहस्य का उद्घाटन करते हुये मुनिराज बोले—पूर्वभव में तूने द्वेष वश जिन-प्रतिमा का अपहरण करके उसे बावड़ी में फिकवा कर २२ घड़ी तक जल मग्न रखा था। उसी के विपाक स्वरूप तुझे अपने पति से २२ वर्ष का दीर्घकालीन विछोह हुआ। जिन बिम्ब का घोर अविनय होने से तुझे भी कलंकित होना पड़ा !

"धर्म वृद्धिरस्तु, कल्याणमस्तु" कहकर वे निस्पृह निग्रन्थ मुनि आकाश मार्ग से बिहार कर गये।

वसंतमाला गुफा के द्वार पर सजग प्रहरी बनकर बैठी है। भीतर गुरुता के भार से परिश्रान्त अंजना क्षण भर को ही

निद्रामग्न हुई थी कि एक सिंह अपनी उसी गुफा में रैन बसेरा करने आया। मानवीय मूर्तियों को देख कर वह क्षण भर के लिये स्तब्ध हो गया; परन्तु दूसरे ही क्षण अपनी स्वाभाविक बीभत्स दहाड़ों से पहाड़ों को भी प्रकम्पित करने लगा। भय-भीता अबलाएँ चीख कर रह गईं। उसी समय सौभाग्यवशात् वसंतमाला विद्याधरी ने आकाश मार्ग से उड़ते हुए एक यक्ष के विमान को देखा। रुदन करती हुई वह स्वयं ऊपर उड़ी और सारा वृत्तान्त कह सुनाया। यक्ष ने नीचे उतर कर अष्टापद का भयानक-विकराल वेश धारण करके उस काल सिंह को मार भगाया। इस प्रकार असहाय अबलाओं की रक्षा हुई। इसी गुफा में भगवान मुनिसुव्रतनाथ की आराधना करते हुए उन्होंने अपने कतिपय दिवस व्यतीत किये।

इसी गहन अन्धकार पूर्ण गुफा में चैत्र शुक्ला अष्टमी के श्रवण नक्षत्रीय मंगल वेला में हमारे चरित नायक हनुमान जी का जन्मावतरण हुआ। युगों युगों का अन्धकार शिशु के कोटि सूर्य सम प्रभा तेज को पाकर विलीयमान हो गया। भीतर-बाहर चतुर्दिक वह गुफा आलोक से भर गई। एक चरम-शरीरी कामदेव के जन्म की यह अनोखी कहानी है। सच है ऐसे नर रत्नों के प्रसव की पृष्ठभूमि में साधनाओं-तपस्याओं और परी-क्षाओं का समुद्र मंथन अवश्य होता है। प्रसूता जननी के सुदीर्घ वियोग, कलंक-कथा आदि की व्यथा यद्यपि समाप्त प्रायः थी; परन्तु एक अन्तिम विकट परीक्षा दुःखों के उपसंहार स्वरूप होना अभी अवशेष थी। परन्तु चूं कि पुण्यशाली जीव गोद में था अतएव बद्ध पाप-कर्म उदय में आते हुए सकुचते थे।

× × ×

एक दिन एक विद्याधर अपनी पत्नी सहित आकाश मार्ग

से उड़ता हुआ उसी गुफा के ऊपर से गुजर रहा था कि अंजना का अरण्य रोदन सुनकर नीचे उतरा। अबला युगल से पूर्व वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त दुखी हुआ परन्तु ज्योंही पारस्परिक परिचय का आदान-प्रदान का सुअवसर आया तो वह सहानुभूति वात्सल्य और ममता के आँसुओं से भरे समुद्र में डूब गई!

"बेटी! तुम्हारा नाम······पता······?"

"अंजना!"

"राजा महेन्द्रराय की बेटी, प्रह्लादराय की पुत्र वधू?"

"जी!"

"और आप का परिचय······?"

"मैं हनुवर द्वीप का राजा प्रतिसूर्य···तुम्हारा मामा।"

मामा! मामा!! मामा!!! सारा गगन-समग्र भू-मंडल एक माँ की ममता से नहीं, बल्कि सैकड़ों माँ माँ की ममता से गूंज गया।

× × ×

नीले निर्मल आकाश में उड़ान भरता हुआ प्रतिसूर्य का तेजगामी विमान पवन से अठखेलियां करता हुआ हनुवर द्वीप की ओर बढ़ा जा रहा है। अतीत की धुंधली छायाओं और भविष्य की स्वर्णिभ मायाओं में खोई हुई पुलकित मना अंजनी अपनी सखी-सहचरी वसंतमाला तथा मामा-मामी के साथ उसी विमान में आरूढ़ हैं। इन चारों प्राणियों का आकर्षण केन्द्र बिन्दु बना हुआ है—वह नवजात शिशु, जिसकी चापल्य पूर्ण शारीरिक विविध सुन्दर चेष्टाएँ उमंगों की सीमाएँ लाँघ जाने को आतुर हो रही हैं। उसकी मृदुल किलकारियों से विमान का अन्तरंग आनन्द से भर गया है। जिस भाँति भेद विज्ञानियों की निर्बन्ध आत्माएँ शरीर के बंधनों को तोड़कर मुक्ति के

लिये निरन्तर उछालें भरतीं रहती हैं; उसी भाँति शिशु की उमंग पूर्ण उछालों को वह विमान अपने में संजोए रखने में नितान्त असमर्थ पाता है। फल स्वरूप एक ही उछाल में बालक उच्चाकाश से बियावान जंगल की गिरि कंदरामयी धरती पर गिरता है जिस पर उसने जन्म लेकर उसे सार्थक किया था।

विमान में हा हा कार मच जाता है। सारा सुखान्त दृश्य एक ही क्षण में दुखान्त दृश्य में परिणत हो जाता है।

विमान नीचे उतारा जाता है और निराश हृदयों द्वारा उसकी खोज शुरु हो जाती है। दैदीप्यमान मणि सी चमकती हुई एक चट्टान के पास जब प्रतिसूर्य पहुँचते हैं……तो देखते क्या हैं कि बालक उसी शिला खंड पर पड़ा हुआ अपने बायें पैर के अंगूठे को मुँह से चूस रहा है मानों उसका अमृत-पान कर रहा है तथा आस-पास की चट्टानें टुकड़े-टुकड़े होकर यहां-वहाँ छितरी पड़ी हुई हैं; मानों वज्र प्रहार से वे चकनाचूर हो गईं। किसी कवि ने सच ही कहा—

"जाको राखे साईयां, मार सके नहिं कोई।"

धन्य हो, हे वज्राङ्गवली हनुमान।

ननिहाल में वज्राङ्गवली शिशु का जन्म महोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। तथा "हनुमान" नाम से उनका नाम करण संस्कार होता है। दूज की चन्द्रकला की भाँति बालक दिन-रात चौगुना वृद्धि को प्राप्त होता है। सारा नगर और राज-परिवार युवराज की सुखद सुंदर वाल क्रीड़ाओं से मंत्र मुग्ध सा रहता है।

× × ×

एक लंबे अरसे के बाद वरुण विजय कर रावण से अनुमति ले जब पवन गगन की राह अपने आतुर वियोगी प्राणों को

अंजना के दर्शनों में समर्पित करने वापिस अपने घर पुटभेदन प्रत्या-वर्तित होते हैं तो वहाँ की सारी कथा उनके वियोगी हृदय पर सौ सौ हथोड़ों की चोट करती है; फिर वियोगी का अन्तर्द्वन्द वियोगी ही जानता है। उसे कवि भी अपनी वाणी द्वारा व्यक्त करने में असमर्थ होता है। फलत: विक्षिप्त पवन अपने माता-पिता राज नगर परिवार सब की घोर उपेक्षा करके अपने श्वसुरालय महेन्द्रपुर पहुँचता है। वहाँ भी अंजना को न पाकर वियावान वीहड़ वन में अनशन धारण कर सन्यास की मुद्रा में बैठ जाता है। वहाँ पवन का एक मात्र साथी उनका हाथी ही था जो किसी को भी अपने स्वामी के समीप नहीं जाने देता था।

अब खोये हुए पवन की खोज होती है—उभय पक्ष से अर्थात् पितृ पक्ष से और श्वसुरालय की ओर से। अन्तत: राजा प्रतिसूर्य द्वारा पवन को अंजनी की क्षेम कुशलता का कर्णप्रिय शुभ संवाद सुनाया जाता है। जिससे जंगल का विषाद मय वातावरण आनन्द मंगल के उल्लास से निनादित हो उठता है।

समधी संबंधियों का यह सुखद सम्मेलन हनुवरद्वीप पहुँचता है। युगल दम्पत्ति के मधुर मिलन से अवनी अम्बर पुलकायमान हो उठते हैं।

× × ×

वस्तुत: हमारे चरित्र नायक हनुमान जी की कथा को उनके जनक जननी के वियोग-संयोग-श्रृङ्गारों ने जितना करुण और रोचक बनाया है। उतनी ही शौर्य एवं विरक्ति पूर्ण स्वयं उनकी अपनी ही जीवन गाथा है।

× × ×

इतर सम्प्रदायों में कामदेव श्री शैल हनुमान जी को बाल

ब्रह्मचारी बतलाया गया है, परन्तु पद्म पुराण में उनका वरण शताधिक कन्याओं ने किया जो युगानुरूप ही था।

नन्निहाल में रहते हुए रावण की ओर से पुनः युद्धामंत्रण प्राप्त होता है; जिसके लिये स्वयं बालक हनुमान कटिबद्ध होते हैं और तरुण वरुण को लांगूल पांस द्वारा पराजित करके रावण के चरणों में डाल देते हैं, जिससे प्रमुदित होकर स्वयं वरुण अपनी पुत्री का विवाह हनुमान जी से करते हैं। यहां रावण भी पुरस्कार स्वरूप अपनी भगिनी चन्द्रनखा की पुत्री अनंग पुष्पा को उनसे व्याह देते हैं। किष्किंधा नरेश सुग्रीव ने भी अपनी पुत्री पद्मावती का वरण श्री शैल हनुमान जी से करके अपने को सौभाग्यशाली माना। इसके अतिरिक्त अन्यान्य लावण्यमयी कन्याओं के स्वामी बनकर हनुमान जी यथार्थ रीत्या गृहस्थ-धर्म का पालन करते हुए अपने दिन आनंद से व्यतीत करते रहे।

आगे का हनुमत् जीवन रामायण के उन सर्वमान्य सुश्रुत प्रसंगो से जुड़ा हुआ है जिनका वर्णन करना पिष्टपेषण के अतिरिक्त कुछ न होगा। यथा:—जानकी हरण के प्रसंग में श्री रामचन्द्र जी तथा सुग्रीव के न्यायनीति पूर्ण पक्ष में मैत्री कर अपने सगे चिर संबंधी पराक्रमी रावण से बैर मोल लेना है। मैत्री निर्वाह तथा न्याय रक्षा के लिए स्वयं अपने प्राणों को जोखिम में डालना, लंका सुंदरी को विजय करना, विभीषण से भेद प्राप्त कर उसे अपने पक्ष में लाना, मुद्रिका निक्षेप द्वारा सीता जी को श्री रामचन्द्र जी के कुशल संवाद पहुँचाना, अशोक-वाटिका विध्वंस करना, मन्दोदरी को भर्त्सना पूर्वक संबोधित करना आदि हैं।

मुख्यतः इन्द्रजीत ने ब्रह्मपाश में बांधकर इन्हें रावण के चरणों में डाल दिया, जहां रावण द्वारा इनकी कटु भर्त्सना की गई

परन्तु वहां भी हनुमान जी ने द्वादश अनुप्रेक्षाओं द्वारा संसार का वास्तविक स्वरूप समझाकर अभिमानी रावण को संबोधित ही किया जो कि एक न्याय नीति पूर्वक जीवन यापन करने वाले सद्गृहस्थ का प्रधान-पुनीत धर्म है।

हमारे चरित नायक शैल हनुमान के इस उद्बोधन ने रावण की प्रज्वलित कोपाग्नि में घृत का कार्य किया। फलस्वरूप बधिक को इनके बध करने का आदेश दिया गया; किन्तु बध प्रयास विफल रहे। स्वयं अपनी मृत्यु के रहस्य का उद्घाटन करते हुए वे कहते हैं :—कि यदि मेरी लंगोटी में रुई गुच्छ की पुच्छ संलग्न कर उसे तेल-घृत युक्त करके मशाल का रूप दिया जावे तो अवश्य ही तुम्हें सफलता मिलेगी। अन्ततः ऐसा ही किया गया। फल क्या हुआ सो आप सब जानते ही हैं कि सारी सोने सी लंका में अग्नि कांड का बीभत्स दृश्य उपस्थित हो गया। जिससे लंका का सारा जन-जीवन त्रस्त हो उठा।

तत्पश्चात् घमासान राम-रावण युद्ध होता है। नियमानुसार नारायण लक्ष्मण द्वारा प्रतिनारायण रावण का संहार होता है। सोने सी लंका का घोर पतन होता है। विभीषण को नव निर्मित लंकोपनिवेश का उत्तराधिकारी घोषित कर उसका राज्याभिषेक किया जाता है। श्री सीताजी पुनः श्री राम को प्राप्त होती हैं। इत्यादि।

दूसरे आगे के प्रसंग भले ही श्री रामचन्द्र जी के नायकत्व में अन्यान्य पात्रों द्वारा उपस्थित किये गये हों परन्तु श्री हनुमान जी द्वारा और क्या सेवायें श्री रामचन्द्र जी के प्रति अर्पित की गईं उनका वर्णन इस ग्रंथ में देखने को नहीं मिलता। संभवतः वे प्रसंग श्री हनुमान जी से असंबद्ध हों?

कवि श्री ब्रह्मराय जी ने उनके व्यक्तिगत गहस्थ जीवन का

चित्रण केवल एक ही पंक्ति में किया है कि :—

"तहाँ राज्य कीनो चिरकाल, न्याय नीति युत जनता पाल।"

श्री हनुमान जी की संतति परम्परा का कुछ हाल इसके द्वारा किंचित् भी ज्ञात नहीं होता। बल्कि अब इस विस्तृत कथा संकोचन का स्मरण कवि को होता है इसलिये वे सीधे ही उनके वैराग्य प्रकरण की ओर बह जाते हैं।

महाश्रमण हनुमान जी के ज्ञान, ध्यान, दर्शन, चारित्र आदि का वर्णन गुणस्थान श्रेणी के आधार पर किया जाता है।

अंत में लौकिक जगत के रामदूत अब अलौकिक जगत के मुक्तिदूत बनकर अरिहंत व सिद्ध के रूप में परमाराध्य परमात्मा बन जाते हैं।

जैन धर्म में अर्हंत, सिद्ध परमात्मा स्वरूप हनुमान जी की पूजा-अर्चना का विधिवत् विधान है। न कि सिन्दूर लिप्त मठ-मढ़ियों में स्थापित वानराकार मूर्ति रूप हनुमान का।

कथा का उपसंहार करते हुए कवि अपनी धारणा तथा परिचय की अभिव्यक्ति करता हुआ अपनी लघुता प्रकट करता है।

यही इस गद्य ग्रंथ का अन्तरंग संक्षिप्त सत्व है।

जय भगवान जय-हनुमान

सिद्ध-महान